चन्दामामा
अक्तूबर १९६९
75P

चन्दामामा

अक्तूबर १९६२

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ०-३५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ४-२०

आन्ध्र प्रदेश

९ वें राफ़िल के परिणाम

प्रथम पुरस्कार : **रु. 2,00,000/-** वाला B. 488815 ★ द्वितीय पुरस्कार : 2 प्रत्येक

चौथे पुरस्कार :
10 प्रत्येक
5,000/- रु. का

B. 646572
B. 272375
A. 369145
B. 267047
A. 315333
B. 025546
A. 579355
A. 012986
B. 060943
B. 026044

पाँचवें
पुरस्कार : 40
प्रत्येक
1,000/- रु. का

B. 608460
A. 398492
B. 344479
A. 315749
B. 213794
A. 553899
B. 283599
B. 601588
B. 189764
A. 374114
B. 188517
A. 991663
A. 390389
B. 487176
A. 851566
B. 173565
B. 112380
B. 572619
A. 286029
B. 927642
B. 530693
A. 276144
B. 016211
A. 138985
B. 220652
A. 715602
B. 220229
A. 610593
A. 520567
A. 877389
B. 137496
A. 274131
B. 830933
A. 649948
A. 246545
A. 605495
B. 689109
A. 785991
A. 171982
B. 600882

छठे पुरस्कार :
100 प्रत्येक
500/- रु. का

A. 867680
A. 135938
A. 781475
B. 113275
B. 667564
B. 524556
B. 465927
B. 207806
B. 881826
A. 616072
B. 240262
A. 008598
A. 811301
B. 099382
B. 482937
B. 656215
B. 307142
A. 432444
B. 044982
B. 890938
A. 995612
B. 234426
B. 129704
B. 682575
B. 738588
B. 726117
A. 148163
A. 304430
B. 940880
B. 541095
A. 977104
A. 850659
A. 572920
A. 173667
B. 345381
B. 939673
A. 322038
A. 806442
B. 918446
A. 939483
A. 716970
B. 759144
B. 267967
A. 470598
A. 970191
A. 220189
C. 098025
B. 169638
B. 430477
A. 095076
A. 220290
B. 548180
A. 261340
A. 126495
A. 483037
A. 984904
A. 203610
A. 259811
A. 444094
A. 287712
B. 294513
A. 443504
A. 622287
B. 449800
A. 753004
B. 837409
A. 053066
B. 455530
B. 849510
A. 575903
A. 969449
A. 865316
B. 746524
A. 857138
B. 349736
B. 610876
A. 988830
A. 829429
C. 082108
C. 052873
B. 869530
B. 753571
A. 206541
A. 550618
B. 670420
B. 312397
A. 873531
B. 165451
A. 604378
B. 888292
A. 013845
B. 657767
A. 871767
A. 372743
B. 216996
A. 520705
B. 869061
A. 971156
B. 971061
A. 344070

सातवें
पुरस्कार : 200
प्रत्येक
100/- रु. का

B. 279831
B. 009085
B. 767368
B. 271374
A. 043648
B. 538292
B. 749290
B. 351951
A. 920792
A. 770884
B. 937561
A. 060382
A. 564680
B. 319901
A. 755124
B. 745301
A. 880795
A. 845220

संक्षेम-निधि

जो ३०-८-१९६९ को घोषित हुए

40,000/- रुपयों का	A. 287464 A. 173883	★	तृतीय पुरस्कार : 3 प्रत्येक **20,000**/- रु. का A. 366265 A. 691414 A. 648091

B. 658514	B. 092488	B. 643729	B. 705486	A. 576106
B. 303640	B. 422096	B. 678152	A. 437858	C. 080859
A. 791246	A. 821971	B. 327709	B. 758801	A. 843605
A. 680007	B. 575181	B. 123859	A. 643034	A. 686707
A. 865834	A. 791397	B. 727012	A. 097453	A. 306167
B. 159609	A. 783314	B. 289889	A. 023674	A. 411710
A. 898944	B. 409925	B. 202225	A. 716734	A. 642126
B. 875887	A. 858891	A. 630093	A. 753274	A. 246448
B. 600736	A. 032837	B. 639181	B. 769424	A. 977554
C. 076824	B. 139536	B. 949215	B. 062738	C. 070442
B. 705453	B. 987112	C. 021244	B. 649074	C. 064461
A. 443327	B. 500777	B. 504153	B. 679718	B. 998815
A. 264226	A. 147173	C. 079924	A. 279250	B. 147659
B. 070378	A. 321123	A. 664425	A. 985660	A. 931133
A. 152937	B. 629999	A. 818253	B. 452662	B. 669463
B. 487393	B. 082396	B. 572279	B. 291292	A. 101933
B. 404755	A. 092144	A. 816991	B. 696228	A. 853176
A. 942830	B. 698803	B. 132623	A. 139634	A. 653874
B. 683983	B. 136746	B. 253715	B. 329813	C. 025021
A. 366537	B. 394303	A. 521813	B. 646703	A. 810013
B. 540197	B. 612452	B. 426651	A. 305682	A. 834011
B. 723957	B. 247759	A. 070828	A. 388856	A. 422540
B. 933430	A. 592582	A. 118955	A. 056607	A. 339385
A. 948107	A. 586041	B. 578718	A. 896042	A. 888795
A. 346224	A. 110097	A. 604000	B. 466105	A. 043473
B. 523879	A. 334418	A. 074202	C. 069390	A. 562899
A. 412856	B. 814505	B. 395129	B. 859190	B. 643178
A. 108080	A. 951310	B. 352237	B. 356223	B. 773592
C. 059097	B. 431513	A. 342433	C. 055795	B. 744439
B. 247580	B. 826670	A. 551556	B. 093591	A. 013493
A. 431996	B. 252909	A. 900469	B. 806678	B. 179222
B. 319773	B. 281149	A. 272235	A. 114408	B. 587976 ♣
A. 796803	B. 685141	A. 186466		C. 080946
A. 160697	B. 633198	A. 536834		
A. 109718	A. 703358	B. 250243		
A. 777955	B. 023633	B. 277397		
A. 124305	B. 647133	A. 501265		
B. 733467	A. 949721	A. 291344		
A. 376791	B. 139548	A. 212525		

ठाकुर पी. हरिप्रसाद

गौरव सचिव

LIFEBUOY
for health

सिग्नल २४ घंटे आप के दांतों की सुरक्षा करता है

सिग्नल की लाल धारियों में
हैक्साक्लोरोफ़ीन है.
जो सड़न पैदा करने वाले
कीटाणुओं को दूर करता है।

पालन पोषण सही कीजिए; बच्चों को बोर्नविटा दीजिए!

चन्दामामा
संपादक: चक्रपाणी
'चन्दामामा' का अगला अंक दीपावली विशेषांक होगा। उस में हम चन्द्रमा संबन्धी पौराणिक गाथाओं के साथ वैज्ञानिक अनुसंधान का भी परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं। साथ ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी के जीवन-संबंधी कई सुंदर चित्र इस अंक की विशेषताएँ हैं। चन्द्रमा पर उतरनेवाले चित्रों से सुसज्जित आगामी अंक निश्चय ही पाठकों के लिए संग्रहणीय एवं उपादेय होगा। अतः आप लोग अपनी प्रति आज ही सुरक्षित करा लें।
वर्ष: २१ अक्तूबर १९६९ अंक: २

आख़िर जो बचता है!

एक गाँव में रामनाथ नामक एक अमीर था। उसके यहाँ पचास गायें थीं। वह बड़ा लोभी था। इसलिए गायें चराने और दूध दुहने के लिए उसने कोई नौकर नहीं रखा, बल्कि वह ये सब काम खुद किया करता था।

कुछ दिन बीत गये। वह मेहनत करने की हालत में न था। इसलिए उसने सोचा कि उन गायों को बेच दे और उस धन से कोई ऐसा व्यापार करे जिससे बड़ा लाभ हो। यह सोचकर गायों को बेचने के लिए वह हाट की ओर चल पड़ा।

चलते चलते रास्ते में एक भयंकर जंगल पड़ा। चोरों ने रामनाथ को अकेले गायों को हाँक कर ले जाते देखा। उसे पकड़कर एक पेड़ से बाँध दिया और गायों को ले गये। चोरों के जाते ही रामनाथ चिल्ला चिल्ला कर रोने लगा।

चोरों ने रामनाथ को जिस पेड़ से बाँध दिया, उस पेड़ के खोखले में एक देवता का निवास था। देवता को रामनाथ पर दया आयी। उसने प्रत्यक्ष होकर उसके बंधन खोल दिये और कहा– "देखो भाई, तुम चिंता न करो। तुम्हारी पचास गायों के बदले में और पचास गायें दे देता हूँ। तुम खुशी से ले जाओ।" यह कहकर देवता ने अपने हाथ की अंगूठी निकालकर आँखों से लगा ली।

तुरंत वहाँ पर पचास गायें प्रत्यक्ष हो गयीं। "तुम रोना-धोना छोड़कर इन गायों को किसी हाट में बेच दो।" देवता ने रामनाथ को समझाया।

रामनाथ को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने गायों को छूकर देखा, सभी गायें एक दम तंदुरुस्त थीं। "देव! हाट यहाँ से बहुत दूर है। क्या मैं चोरों से

नवीन कुमार

बचाकर इन्हें हाट तक पहुँच सकता हूँ? ये सब गायें बिक जायेंगी! क्या मैं उस धन को लेकर सुरक्षित घर पहुँच सकता हूँ? मुझे सन्देह ही हो रहा है।" रामनाथ ने कहा।

"तब तो एक काम करो! इन गायों का दाम बताओ, मैं रुपये ही दूँगा?" देवता ने पूछा।

"प्रत्येक गाय का दाम एक सौ रुपये के हिसाब से पचास गायों का दाम पाँच हज़ार होता है।" रामनाथ ने कहा।

देवता ने पुनः अंगूठी को आँखों से लगाया। झट पाँच हज़ार रुपयों की गठरी रामनाथ के सामने गिर पड़ी। रामनाथ ने गठरी उठाकर देखते हुये कहा—"यह गठरी न मालूम कितनी भारी है। क्या मैं इसे घर तक ढोकर ले जा सकता हूँ? कृपया एक गाय दे दीजिये। उस पर यह गठरी लादे घर ले जाता हूँ।"

इस पर देवता ने मान लिया। गाय पर गठरी लादे रामनाथ ने चार-पाँच कदम बढ़ाये ही थे कि उसे बाकी गायों को वहीं पर छोड़कर जाने में बड़ा दुख होने लगा। "हे देव! इन सारी गायों को मैं हाँक कर ले जाऊँ तो आपको कोई एत-राज न होगा न? इनको तो आपने पहले

मुझे दे ही दिया है?" रामनाथ ने देवता से कहा।

"तुम चाहो तो इन गायों को भी ले जाओ।" देवता ने कहा।

रामनाथ ने चार क़दम और आगे बढ़ाये, फिर उसके दिमाग़ में कोई विचार आया। हर गाय की पीठ पर एक हज़ार रुपयों की गठरी हो तो क्या ही अच्छा हो! उसे ज़िन्दगी-भर कोई तकलीफ़ न होगी। यह सोचकर रामनाथ फिर लौट पड़ा और पूछा—"देव! मैं ने जो कुछ माँगा, आपने दे दिया। प्रत्येक गाय पर पाँच-पाँच हज़ार की गठरी प्रदान करेंगे तो मैं आपका एहसान ज़िन्दगी-भर नहीं भूलूँगा।"

"अच्छा! ऐसा ही हो!" ये शब्द कहते देवता ने अपने हाथ की अंगूठी को आँखों से लगाया। तुरंत सभी गायों पर रुपयों की गठरियाँ प्रत्यक्ष हुईं।

रामनाथ का मन संतोष के बदले शंका से भर उठा। कुछ ही मिनटों में उसके दिल में इतनी इच्छाएँ पैदा हो गयीं, न मालूम उसकी ज़िन्दगी में और कितनी इच्छाएँ पैदा होंगी। उनकी तृप्ति के लिए यह अंगूठी उसके पास हो तो क्या ही अच्छा हो। आख़िर यह अंगूठी देवता के लिए किस काम की है? यह सोचकर रामनाथ देवता के पास गया और बोला—"देव! यह अंगूठी मुझे दीजियेगा तो मैं आपको और कष्ट न दूँगा।"

"नहीं, मनुष्य का हाथ लगने से इस अंगूठी का प्रभाव जाता रहेगा।" यह कहते देवता ने अपना हाथ खींच लिया। पर रामनाथ ने उस अंगूठी को छीन लिया।

दूसरे क्षण देवता ग़ायब हो गया। गायें और गठरियाँ भी ग़ायब हुईं। अंगूठी भी अदृश्य हो गयी। केवल रामनाथ अकेले वहाँ पर बच रहा!

पूर्ण मानव

विक्रमपुर के राजा का अचानक देहांत हो गया, इसलिए कम उम्र में ही युवराज का राज्याभिषेक हुआ। राजगुरु ने दुनियादारी से अनभिज्ञ नये राजा से कहा— "राज्य का शासन करने के लिए तुम्हें यह जानना जरूरी है कि मानवों में कितनी मात्रा में मानवता है। मैं यह वृत्तांत तुमको जब भी मौका मिलेगा, सुनाते जाऊँगा।"

"यह वृत्तांत समझने में कितना समय लग सकता है?" राजा ने पूछा।

"बड़ी सावधानी से मनुष्यों के चरित्रों का परिशीलन करते जाओगे तो ज्यादा समय न लगेगा।" राजगुरु ने समझाया।

इसके बाद राजा ने अपने दरबारियों को आदेश दिया कि उन्हें जो भी अनुभव हों, वे राजा को सुनाते जावें।

एक बार राजा के एक जासूस ने आकर यों कहा— "मैं जंगल के एक रास्ते में जा रहा था। मेरे पैर में कांटा चुभ गया। मैं लंगड़ाते चलने लगा। तब एक आदमी दौड़ता मेरे पास आया और बोला— "शेर आ रहा है, बच जाओ!" मुझे सावधान कर वह पेड़ पर चढ़ गया। मैं भी एक दूसरे पेड़ पर चढ़ बैठा। थोड़ी देर बाद उसी रास्ते से एक शेर चला गया। हम दोनों पेड़ों से उतर कर अपने अपने रास्ते चले गये।"

इस पर राजगुरु ने राजा से कहा— "जासूस ने जिस आदमी का वृत्तांत सुनाया, उसमें एक चौथाई मानवता है। उसने शेर के आने की बात तो बतायी, मगर बचाने की बात उसने नहीं सोची। केवल उसने अपनी रक्षा की बात सोची।"

कुछ दिन बाद एक दूसरे जासूस ने एक दूसरी घटना सुनायी। "एक गरीब आदमी खाने के अभाव में कमजोर होकर

एक अमीर के घर के सामने बेहोश हो गया। अमीर ने उस गरीब को खाना खिलाया और अपने घर नौकर रखा। एक दिन वह अमीर उस नौकर को बुरी तरह से पीट रहा था, तब उस रास्ते से चलनेवाले एक आदमी ने रुककर अमीर से पूछा—"बेचारे को तुम पीटते क्यों हो?"

"यह जब बेहोश होकर मेरे घर के सामने गिर पड़ा तब मैंने इसे खाना खिलाया और उससे एक पत्र लिखवाया कि वह जिन्दगी-भर मेरा सेवक बनकर रहे। वह मेरे हाथ बिक गया है, इसलिए मैं अपनी इच्छा के अनुसार कुछ भी कर सकता हूँ।" अमीर ने जवाब दिया।

राहगीर ने अमीर से वह पत्र मंगवाकर पढ़ा और उसे फाड़कर फेंकते हुए गरीब आदमी से कहा—"तुम्हारी गुलामी पूरी हो गयी है। अब तुम आज़ादी से घूम सकते हो।" ये बातें कहकर वह चला गया।

"उस राहगीर में आधी मात्रा में मानवता है। इससे अधिक होती तो वह उस गरीब के भविष्य की बात सोचता और कुछ इंतज़ाम करता। अब उसे कोई दूसरा भी नौकर बना सकता है।" राजगुरु ने कहा।

"अमीर की बात क्या है?" राजा ने पूछा। इस पर राजगुरु ने समझाया—

"उसमें मानवता नाममात्र के लिए भी नहीं है। वह नरसंहारी राक्षस है।"

एक दिन राजदरबार में दो व्यापारी आये। उनकी हालत बड़ी दयनीय थी। उन लोगों ने बताया—वे अपने साथ कीमती चीज़ें लेकर यात्रा कर रहे थे। रास्ते में लुटेरों ने उनकी चीज़ों को लूटा और उन्हें मार डालने के ख्याल से तलवारें उठायीं। तब उनके सरदार ने लुटेरों को रोकते हुए कहा—"तुम लोग बेवकूफ़ हो! ऐसे लोगों को हम मारते जायें तो हम लूटेंगे किनको?" यह कहकर उसने दोनों व्यापारियों के राह-खर्च भर की रकम देकर उन्हें भेज दिया है।

"चोरों के सरदार में तीन चौथाई मात्रा में मानवता है। उसका पेशा उसे पूर्ण मानव बनाने में बाधा डालता है।" राजगुरु ने कहा।

एक दिन एक राजभट दो आदमियों को राजदरबार के सामने लाया। उनमें एक अमीर था और दूसरा गरीब था।

"महाराज! इस गरीब को इस अमीर ने पानी में ढकेल दिया और वह भी पानी में गिर पड़ा। मैंने यह घटना अपनी आँखों से देखी है। जब मैं उनके

निकट पहुँचा, तब तक दोनों किनारे पर आ गये थे।" राजभट ने कहा।

"तुमने इस गरीब को नदी में क्यों ढकेल दिया?" राजा ने अमीर से पूछा।

इस पर अमीर ने यों सुनाया— "महाराज! मैंने इस गरीब के साथ और भी कई अन्याय किये हैं, वे सारी बातें सुनाता हूँ, आप ध्यान से सुनिये, यह आदमी मेरा पड़ोसी है। बड़ा गरीब है। असहाय है। इसलिए मैंने इसकी जगह पर कब्जा कर लिया। यह मेरी दुष्टता के बारे में सबसे कहता-फिरता था। यह सोचकर मैंने इसके घर में आग लगवा दी कि यह मेरी इज्जत धूल में मिला रहा है। इस पर जो तहकीकात हुई, उसमें मैंने सबको मनवाया कि गरीब की लापरवाही से ही घर में आग लग गयी है। यह फिर से घर बनवा न सका। आज नदी के किनारे पर यह मुझे दिखाई पड़ा और पूछा—"तुमने मुझे बरबाद कर दिया है।" इस पर क्रोध में आकर मैंने इसे नदी में ढकेल दिया। यह मुझे पकड़े हुए था, इसलिए उसके साथ मैं भी नदी में गिर पड़ा। मुझे तैरना मालूम न था, इसलिए मुझे डूबते देख इसीने मुझे बचाकर किनारे लगा दिया।"

राजगुरु की सलाह पर राजा ने गरीब को अमीर से उसका नुकसान भरवा दिया और अमीर को भेज दिया।

इसके बाद राजगुरु ने राजा से कहा— "देखा, बेटा! यह गरीब आदमी पूर्ण मानव है! इसीलिए यह अमीर के स्वभाव को भी बदल सका। जो पूर्ण मानव नहीं होता, वह दूसरों के स्वभावों को बदलकर उनमें मानवता पैदा नहीं कर सकता।"

राजगुरु के उपदेशों से राजा को मानवता के स्वरूप का परिचय मिला। उस दिन से राजा बड़ी होशियारी से राज्य करने लगा।

शिखिमुखी की बात पूरी भी न हो पायी थी कि अघोरियों में से एक ने उस पर शूल का प्रहार किया। शिखी ने वार बचाकर उसकी गरदन पर तलवार चलाई। वह जोर से "महाकाल!" चिल्लाते जमीन पर पेड़ की भाँति गिर पड़ा। इतने में उनमें से एक ने गरजकर कहा—"ठहरो! उसे मत मारो! वह हमारे गुरु विक्रमकेसरी का नाम लेता है!"

तब तक वहाँ और चार अघोरी आ पहुँचे। शिखिमुखी का आदेश सुनकर विक्रमकेसरी, अजित और वीरभद्र भागने के बदले, तलवार खींचकर उसकी रक्षा के लिए आगे आये। एक अघोरी ने अपने अनुचरों को रोका और शिखिमुखी के सामने आकर कहा—"हमारे अघोरियों के सामने तुम्हारी तलवारों व भालों का प्रहार बेकार है। मैंने अपने अनुचरों को इसलिए नहीं रोका कि हम लोग तुमसे डरते हैं। बल्कि इसलिए मैंने रोका कि तुमने हमारे गुरु विक्रमकेसरी का नाम लिया और उन्हें भाग जाने को कहा। यह बात हमें बड़ी विचित्र मालूम होती है। तुम कौन हो? हमारे गुरु विक्रमकेसरी कहाँ पर हैं?"

अघोरी के सवाल से शिखिमुखी सारी हालत समझ गया। उसे तापसों से यह मालूम हो गया था कि महाराज विक्रमकेसरी अघोरियों के प्रदेश में बहुत समय तक रहे थे, ये लोग शायद अपने साथी विक्रमकेसरी को महाराज विक्रमकेसरी समझ रहे होंगे।

शिखिमुखी के सामने जब विक्रमकेसरी आया, तब वह उस अघोरी को विक्रम को दिखाते हुए बोला—"मैं ही विक्रमकेसरी हूँ! इनके दादा महाराज विक्रमकेसरी कुछ साल पहले इस प्रदेश में आये थे। लेकिन हमें आज तक उन महाराजा का पता

न चला कि उनका हाल क्या है! उन्हीं की खोज में हम शूरसेन देश से यहाँ पर आये हुए हैं!"

शिखिमुखी से जिसने प्रश्न किया था वह अघोरी दल का नेता था। शिखिमुखी का उत्तर सुनते ही उसने अपना शूल नीचे फेंक दिया और विक्रमकेसरी के सामने आकर झुककर उसे प्रणाम किया। तब कहा—"गुरु विक्रमकेसरी के चेहरे से तुम्हारा चेहरा मिलता-जुलता है। उन्होंने हमारे दल को कठिनाइयों में समय सलाहें दीं और भयंकर बीमारियों की जड़ी-बूटियों द्वारा चिकित्सा करके हमारी बड़ी मदद भी की। हम कभी भी उनका ऋण चुका नहीं सकते। लेकिन..." यह कहते शिखिमुखी की आँखों में घूरते हुए बोला—"इनकी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं। आप लोग कैसे विश्वास करते हैं कि हमारे गुरु विक्रमकेसरी अब तक जीवित हैं? अगर वे जिंदा होते तो अवश्य अपने देश में लौट आते?"

"कुछ अफवाहें हमने भी सुनीं कि महाराज विक्रमकेसरी जीवित हैं। हमें जो सबूत मिले हैं, उनके आधार पर हमने यह अनुमान लगाया कि वे ब्रह्मपुत्र नदी की

घाटियों के एक चिकित्सालय में गये थे और उसके बाद उनका पता न चला।" शिखिमुखी ने उन्हें समझाया।

"तुम्हारा सोचना गलत नहीं है। हमारे बहुत-कुछ समझाने पर भी सुने बिना गुरु विक्रमकेसरी इन्दु जाति के निवास करनेवाली घाटियों में चले गये। उसके बाद हमें भी आज तक उनका पता न चला। हम यह नहीं सोचते कि इन्दु लोगों ने उन्हें मार डाला होगा, बल्कि यह मानते हैं कि वे किसी भयंकर बीमारी के शिकार हो मर गये होंगे।" अघोरियों के नेता ने कहा।

"इसी बात का हम लोग निर्णय करने आये हैं। लेकिन मालूम होता है कि हमें एक पुजारी के द्वारा ही नहीं बल्कि आपके अघोरियों के ज़रिये भी इस प्रयत्न में खतरों का सामना करना पड़ेगा।" शिखिमुखी ने कहा।

इस पर अघोरियों के नेता ने हँसकर कहा—"हमारी जाति के द्वारा आप लोगों को कोई तकलीफ़ न होगी। इसके लिए मैं आपकी कुहनी में एक रुद्राक्ष-माला बांध देता हूँ। फिर भी आप लोग सावधान रहिये। आप लोगों के अपने घर लौटने के पहले हम इस महा अरण्य में कहीं न कहीं आपसे मिलेंगे। मेरा नाम घोरचित्त है।" यह कहकर उसने शिखिमुखी के हाथ में रुद्राक्ष-माला बांध दी। इसके बाद उसकी अनुमति ले उस घायल अघोरी को अपने अनुचरों द्वारा उठवाकर वहाँ से चला गया।

शिखिमुखी जांगला का हाथ पकड़कर उसे चलाते उस पेड़ के नीचे ले आया, जहाँ वे ठहरे थे। अजित और वीरभद्र रसोई के काम में लग गये। शिखिमुखी ने विक्रमकेसरी को थोड़ी दूर ले जाकर कहा—"विक्रम, जांगला पर अजगर का हमला करने के पहले मैंने पेड़ों की आड़ में किसी के बोलने की आवाज़ सुनी है! मुझे इस पर संदेह होता है।"

"ऐसी बात हो तो हम जांगला से सच्ची बात जान सकते हैं न?" विक्रमकेसरी ने कहा।

"अगर उसने हमसे छिपाकर पेड़ों की आड़ में किसी से बात की हो तो हम उससे सचाई जान नहीं सकते। हो सकता है, मेरे सुनने की भूल हो। कभी कभी हवा के झोंकों से पत्ते और टहनियाँ की ऐसी आवाज़ होती है जैसे दो आदमी बातें कर रहे हों। चाहे जो हो, हमें बहुत ही

"सावधान रहना चाहिये ।" सिद्धिमुखी ने समझाया ।

रसोई के बनते ही सबने खाना खाया । तब तक जोगला भी उठकर काम में लग गया था । पेड़ के नीचे सिद्धी और विजय ने एक डेरा डाला और उसमें लेट गये । अजित, वीरभद्र और जोगला ने खच्चरों को दाना खिलाया और चारों तरफ अलाव जलाये । एक पहर बीत चुका था । इसलिए बाकी तीन पहरों में प्रत्येक पहर में एक एक व्यक्ति के जागने का उन्होंने निश्चय किया ।

जागने की पहली बारी अजित की थी । बीच बीच में वह सूखी लकड़ियाँ लाकर अलावों में डालता रहा ताकि वे अंगारे बुझ न जायें । फिर आँखें फाड़-फाड़कर वह चारों तरफ अंधेरे में देखता रहा, ताकि हिंस्र पशु और चोर न आवें । किसी प्रकार की दुर्घटना के बिना एक पहर और बीत गया । दूर पर जंगल में शेर और सियारों की चिल्लाहटें अजित ने सुनी थीं । बीच-बीच में सीटी जैसी आवाज भी उसके कानों में पड़ी थी । उसने सोचा कि यह चोर की आदिमों की आवाज होगी !

अजित की बारी के समाप्त होते ही जोगला पहरा देने लगा । अजित आकर वीरभद्र से थोड़ी दूर पर लेट गया । लेकिन उसे नींद नहीं आयी । बघेरियों का हमला देखने के बाद उसे इस बात का डर लगा रहा कि इस जंगल में किसी भी क्षण खतरा पैदा हो सकता है । इसलिए वह जागते रहने की कोशिश करने लगा ।

थोड़ा समय और बीता । अजित की आँखें लग गयीं । तभी दूर पर किसी हिंस्र पशु की आवाज सुनायी दी । उसने आँखें खोलकर देखा । जोगला अलावों के

पास खड़े जंगल की ओर ताक रहा है। अलावों में उसने सूखी लकड़ियाँ न डाल दी थीं, इसलिए वे सब बुझने की हालत में थीं।

अजित ने उठकर जांगला को डांटना चाहा, तभी कुछ पेड़ों की आड़ में से सीटी की आवाज़ सुनायी दी। तुरंत जांगला भाला कंधे पर लिये बैठ गया। अजित ने सोचा कि कोई खतरा पैदा होनेवाला है, उसने सर घुमाकर शिवा और विजय के डेरे की ओर देखा। वहाँ पर उसने जो दृश्य देखा उससे अजित का शरीर कांप उठा।

चीता डेरे के पास पहुँचा। वह डेरों में से भीतर अपना सर घुसा रहा है। लेकिन लाल कुत्ता कहाँ? उसे आश्चर्य हुआ। खतरे की कल्पना कर उसका डर जाता रहा। झट उसके दिमाग में कोई विचार सूझा।

"वीरभद्र, उठो! खतरा पैदा हो गया है!" यह कहते वह उठ खड़ा हुआ और निशाना देख चीते पर भाला फेंका। सीधे जाकर भाला चीते की छाती में घुस गया। वह पीड़ा से चीख उठा। उठते-गिरते वह झाड़ियों की ओर भागने की कोशिश करने लगा।

अजित की चिल्लाहट और चीते की कराहट सुनकर शिखी और विक्रम जाग पड़े और तलवार लेकर खेमे से बाहर दौड़ आये। अजित ने वीरभद्र को आदेश दिया कि जांगला के भागने से रोके, तब वह शिखी और विक्रम के पास गया। सारी बातें संक्षेप में उन्हें सुनाकर कहा—"मुझे इन्हीं झाड़ियों में से सीटी की आवाज सुनाई दी है। मेरी शंका है कि इन झाड़ियों के भीतर दुश्मन छिपा बैठा हुआ है।"

यह बात सुनते ही विक्रम ने धनुष और बाण ले उस झाड़ी पर तीन बाण छोड़ दिये। तीसरे बाण के झाड़ी पर लगते ही एक दर्दनाक आवाज सुनायी दी। दूसरे क्षण झाड़ी हिल उठी और उसमें से एक काली आकृति के भागते हुई दिखायी दी।

शिखी ने अजित को सावधान करते हुए कहा—"इस धुंधली चांदनी में उसका पीछा करना खतरे से खाली नहीं है। हो सकता है, हमारे दुश्मन उसके आस-पास छिपे बैठे हों। तुम दोनों में से एक जांगला पर निगरानी रखे रहो। दूसरा व्यक्ति हमारे सामान की रक्षा करे। मैं विक्रम को साथ लेकर देख आता हूँ कि घायल चीता का क्या हाल है! घायल हिंस्र पशु को छोड़ देना खतरनाक होता है।"

शिखी और विक्रम चीतेवाली झाड़ी की ओर निकल पड़े थे। तब अजित बोला—"साहब, इतना सब होने पर भी हमारा काला कुत्ता चुप क्यों है? भूँकता तक नहीं? मुझे आश्चर्य होता है। उसका क्या हुआ?"

"उसे किसी ने...किसने क्या—इस जांगला ने नशीली चीजें खिलायी होंगी। तुम्हारी चिल्लाहट के सुनते ही उसे मैंने

धप थपाकर जगाना चाहा। वह बेहोश-सा पड़ा है...उसकी बात बाद को देखेंगे।" शिखी ने कहा।

जलनेवाली एक लकड़ी लेकर शिखी और विक्रम झाड़ी के पास पहुँचे। चीता गरजकर उन पर कूदने को तैयार हुआ। लेकिन वह घायल था और भाला छाती में चुभा ही रहा, इसलिए उसके पैर उठते न थे। झाड़ी से कूदते ही भाला उसके पेट में और चुभा, जिससे वह नीचे गिरकर छटपटाने लगा।

शिखी ने भाले से चीते के सर पर दो-चार बार मार दिया, तब चीते की छाती में चुभे भाले को ज़ोर से खींचा। पल भर छटपटाकर चीता मर गया।

"शिखी! यह कैसा है?" यह कहते विक्रम ने अपना भाला चीते की गर्दन पर टिका दिया। चीते के कंठ में एक चमड़े की पट्टी बंधी थी।

"यह पालतू चीता है। इसे जिसने पाला, वह झाड़ी में छिपा है, उसी ने चीते को हम पर उकसाया। उसे तुम्हारा बाण लगा है। अब चलो, उसको भी देख लें।" यह कहते शिखी आगे आगे चलने लगा और विक्रम उसके पीछे चला।

जान के डर से कांपनेवाले जांबवा के पास शिखी जब गया, तब वह प्रणाम करते उसके पैरों पर गिरने लगा। शिखी ने उसकी गर्दन पकड़कर खींचकर खड़ा किया और उसके हाथ में जलनेवाली एक लकड़ी थमाकर कहा—"सारी बातें बाद को कर लेंगे। पहले हमें बाण की चोट खाये तुम्हारे दोस्त को देखना है। तुम आगे चलो। भागने की कोशिश करोगे तो तुम्हारी पीठ में भाला भोंक दूंगा।"

जांबवा आनत मस्तक कांपते झाड़ियों की ओर बढ़ा। उसके पीछे शिखी और विक्रम चलने लगे।

समझौता

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल, सदा की भांति मौन श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन, कभी कभी असाधारण प्रकार के प्रयत्नों से प्राप्त न होनेवाले कार्य की सफलता यों ही हाथ लग जाती है। इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुम्हें प्रताप की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा। कोसल देश पर जिस समय सुदर्शन शासन करता था तब विदेह पर जयदेव राज्य करता था। उन दोनों देशों के बीच दुश्मनी थी। कोसल देश बड़ा था, शक्तिशाली और संपन्न भी था, फिर भी दूसरे देशों के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित करने में विदेह रोड़ा बना हुआ था।

वेताल कथाएँ

इस वजह से कोसल देश को ही बड़ा नुकसान होता था।

विदेह को हराकर उसे अधीन करने से कोसल का बड़ा लाभ हो सकता था, मगर कोसल का राजा सुदर्शन कायर था। जब कि विदेह का राजा जयदेव बड़ा पराक्रमी था और तलवार की लड़ाई में वह सोलह प्रकार की कलाएँ प्रदर्शित करने में निपुण था।

सुदर्शन के प्रताप नामक एक लड़का था। वह अपने पिता जैसा कायर न था। अच्छा पराक्रमी व वीर था। युवा वय के होते होते उसने सभी तरह की युद्ध-विद्याओं में असाधारण प्रवीणता प्राप्त कर ली। खासकर तलवार की लड़ाई में उसने बड़ा कौशल प्राप्त किया।

सुदर्शन के जब अंतिम दिन निकट आये, तब उसने अपने पुत्र को बुलाकर कहा—"तुम मुझे यह वचन दो और मेरे बहुत दिनों की इच्छा की पूर्ति करो। जयदेव के सामने ठहरने की मेरी सामर्थ्य न थी, इसीलिए मैं ने विदेह पर हमला नहीं किया। तुम महान वीर हो, जयदेव बूढ़ा हो चुका है। तुम लड़ाई में उसे पराजित करो। वह हमारी बगल में छुरी बनकर बैठा हुआ है। विदेह को कोसल राज्य में मिला लो! इस काम के पूरा न होने तक विश्राम न करने की शपथ करो।" प्रताप ने अपने पिता की इच्छा की पूर्ति करने का वचन दिया। इसके बाद सुदर्शन का देहांत हुआ और प्रताप का राज्याभिषेक हुआ।

राज्य को संभालने में ही प्रताप के कुछ दिन बीत गये। वह अपने पिता को दिये गये वचन को नहीं भूला था। बल्कि उसके मन में यह विचार और प्रबल होने लगा था कि विदेह पर हमला करके जयदेव को पराजित कर उसमें

भी अधिक यश प्राप्त करना है और अपने राज्य के लिए रोड़े बने हुये विदेह के सिंहासन पर भी अधिष्ठित होना है ।

फिर भी प्रताप ने विदेह पर हमला करने का प्रयत्न नहीं किया था, इसका कारण जयदेव की पुत्री चारुमति ही था ।

चारुमति के सौंदर्य का समाचार सुनकर प्रताप ने उसी दिन उसके साथ विवाह करने का निश्चय कर लिया था । परंतु उनका विवाह होना संभव न था । इस के लिए प्रताप को दो प्रकार के प्रयत्न करने थे । एक—जयदेव को हरा कर उसकी पुत्री के साथ जबर्दस्ती विवाह करना और दूसरा—उसने अपने पिता को जो वचन दिया था, उसकी उपेक्षा करके जयदेव के साथ समझौता कर उससे यह प्रार्थना करना कि वह चारुमति का उसके साथ विवाह करे ।

जबर्दस्ती विवाह करने को शायद चारुमति तैयार न हो जाय और उसकी प्रार्थना को जयदेव ठुकरा भी सकता है!

इसलिए प्रताप के सामने बड़ी विषम समस्या ही पैदा हो गयी । इस हालत में प्रताप को एक तीसरा मार्ग ढूंढना पड़ा । उसने राज-काज का भार अपने मंत्रियों को सौंप दिया । वेष बदलकर प्रवीण नाम से विदेह राज्य में पहुँचा ।

उसने मौके का इंतजार किया, आखिर चारुमति से मिल कर अपना परिचय दिया और उसके प्रति अपना प्रेम प्रकटकर उसकी इच्छा जाननी चाही । चारुमति ने भी प्रताप के बारे में काफ़ी कुछ सुन रखा था । वह भी यह सोचती थी कि उन दोनों के बीच दुश्मनी न होती तो बड़ी आसानी से उनका विवाह हो जाता । इसलिए उसने अपना विचार उसी संकेत में बता दिया ।

अब जयदेव की स्वीकृति प्राप्त करनी थी । इस के लिए प्रताप ने एक उपाय

सोचा। यह उपाय बड़ा आशाजनक था। परंतु उसके द्वारा जयदेव की इच्छा ही पूर्ति होगी। वह यह कि प्रताप का विदेह को जीतने के बदले, जयदेव को कोसल को जीतने का मौका देना।

दूसरे दिन प्रताप ने राजा से एकांत में मिलकर बातचीत करने की अनुमति प्राप्त की। जयदेव ने प्रताप को अपने सामने देख पूछा—"तुम मुझ से क्या कहना चाहते हो?"

"महाराज, मेरा नाम प्रवीण है। मैं राजवंशी हूँ। मैं बहुत समय से कोसल राजा के दरबार में रहा। वहाँ के सभी रहस्यों को मैं जानता हूँ। अगर आप कोसल को जीतना चाहें तो मैं उस के लिए आवश्यक सारी सहायता कर सकता हूँ।" प्रताप ने उत्तर दिया।

जयदेव चाहता तो बिना खून की नदियाँ बहाये कोसल को जीत सकता है। इस उपकार के लिए वह अपनी पुत्री के साथ उसका विवाह करने में संकोच न करेगा। उसका विवाह भानुमति के साथ होने पर वे दोनों राज्य एक हो जायेंगे। दोनों का वही राजा बनेगा। जयदेव की इच्छा भी पूरी होगी और उसकी भी।

परंतु प्रताप की यह चाल न चली। इस का कारण यह था कि उसने जब भानुमति से बातें कीं, तब उसकी मुख्य परिचारिका ने सारी बातें सुन ली थीं। प्रताप ने उस परिचारिका की उपेक्षा की। प्रताप जब राजा से एकांत में बातें करने को जा रहा था तब उस परिचारिका ने उसे देख लिया। उसने उन दोनों की बातें भी गुप्त रूप से सुन लीं।

जयदेव ने प्रताप की बातें सुनकर कहा—"मैं सोचकर उत्तर दूँगा। तुम तब तक राजमहल में ही रहो।" यह कहकर राजा ने प्रताप को भेज दिया। तब
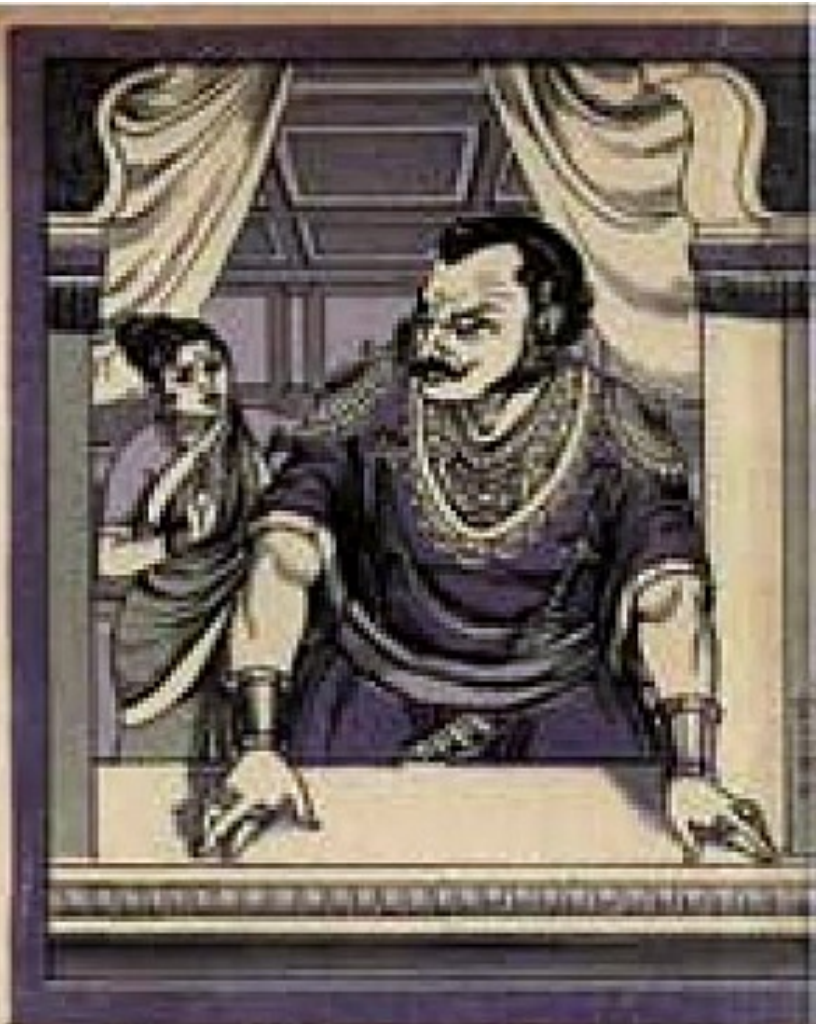
परिचारिका ने राजा से कहा—"राजन, उस युवक की बातों पर यकीन न कीजियेगा। वह कोसल का राजा है।"

जयदेव क्रोध से आग बबूला हो उठा। प्रताप को कैद कर बंदी गृह में रखने का आदेश दिया। यह समाचार मालूम होने पर चारुमति बड़ी दुखी हुई। उसने अपने पिता के पास जाकर निवेदन किया—"पिताजी! प्रताप धोखा देने के विचार से हमारे राज्य में नहीं आया है, बल्कि मुझ से वह प्यार करता है। यही बात प्रकट करने के लिए यहाँ आया हुआ है। इस प्रयत्न में उसने नाना प्रकार की यातनाएँ भी झेल ली हैं। इसलिए कृपया आप उसको बंदी गृह से मुक्त कर उसके साथ मेरा विवाह कर दीजिये।"

"उस दुष्ट का समर्थन करते हुए मुझे उपदेश देने की चेष्टा मत करो। मैं जानता हूँ कि तुम्हारा विवाह किस प्रकार के व्यक्ति के साथ करना है।" जयदेव ने चारुमति को डांट बतायी।

जयदेव ने बंदीगृह में जाकर पूछा—"मूर्ख! यह जानते हुए भी तुमने मेरे राज्य में कदम क्यों रखा कि तुम्हारे प्राण खतरे में पड़ जायेंगे? अगर किसी

कारण से तुम मेरे राज्य में प्रवेश करना चाहते थे तो प्रकट रूप में आते। कायर की तरह तुम छद्मवेष में क्यों आये? इस वक्त मैं तुम्हारा शिरच्छेद करवा दूँ तो तुम्हारी रक्षा करनेवाला कौन है?"

जयदेव ने सोचा कि प्रताप भय के मारे कांप उठेगा। लेकिन उल्टे उसके चेहरे पर गौरव झलकने लगा। उसने मंदहास करते हुए कहा—"आपके राज्य में छद्मवेष में आने का कारण मेरी रक्षा के ख्याल से नहीं, बल्कि आपके राज्य का हित मानकर ही। अगर मैं प्रकट रूप में आता तो सेना लेकर ही आता। आपका राज्य
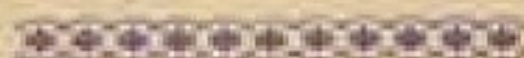
एक ही दिन में श्मशान बन जाता। मैं आपकी पुत्री चारुमति का हृदय जानने के लिए आया हूँ। आपके राज्य को तहस-नहस करने नहीं।"

"मेरी पुत्री का हृदय तुमने जान लिया?" जयदेव ने प्रताप से पूछा।

"हाँ, जान लिया। मेरे साथ विवाह करने की उसके मन में प्रबल इच्छा है।" प्रताप ने उत्तर दिया।

"तुम भीरु हो! मुझे जीतने की हिम्मत नहीं रखते हो। इसलिए तुम छल से मेरी पुत्री के साथ विवाह करके मेरे राज्य का हरण करना चाहते हो? उल्टे यह डींग मारते हो कि मेरे राज्य को तहस-नहस कर डालोगे।" जयदेव ने धमकी दी।

"आपकी पुत्री के साथ विवाह करने के साथ ही साथ हमारे दोनों राज्य एक हो जावें, यह भी इच्छा मेरी है। ऐसा होना है तो या तो मुझे आपके राज्य को जीतना है अथवा आपके द्वारा मेरे राज्य को जितवाना है। मेरा राज्य जीतने के लिए मैंने आपको सरल उपाय बता दिया है। आपने इस भ्रम में पड़कर कि इसमें कोई कुतंत्र है, मुझे बंदी बनाया।" प्रताप ने समझाया।

"तुम अगर भीरु न होते तो अपने राज्य को मुझे सौंपने की न सोचते। तुम्हारे लिए उचित दण्ड शिरच्छेद कराना ही है।" जयदेव ने कहा।

प्रताप ने आश्चर्य में आकर कहा—"मैंने सुना है कि आप महान पराक्रमी हैं! दुश्मन को निरायुध बनाकर उसका शिरच्छेद करानेवाले से बढ़कर कायर कौन होगा?" प्रताप ने कहा।

जयदेव के क्रोध का पारा चढ़ गया। वह अपने क्रोध पर नियंत्रण रखते हुए बोला—"अगर मैं तुमको उदारता के साथ बंधन मुक्त कर दूँ तो तुम क्या करोगे?"

"आप ऐसा ही साहस करेंगे तो मैं अपने देश में जाकर सेनाओं के साथ लौटूंगा और आपके राज्य को मटिया मेट कर डालूंगा। हो सका तो द्वन्द्व-युद्ध में आपके प्राण लूंगा।" प्रताप ने कहा।

जयदेव की आँखें चमक उठीं। उसने प्रताप से कहा—"अब तुमको ऐसा मौका देता हूँ। मुझ से द्वंद्व-युद्ध करो।"

उसी समय प्रताप को बंदी गृह से मुक्त किया गया। जयदेव ने तुरंत शस्त्र-चिकित्सकों को बुला भेजा। प्रताप के हाथ एक तलवार देकर, उसने दूसरी तलवार ली और युद्ध के लिए तैयार हो गया। युद्ध में बड़ी देर तक प्रताप और जयदेव समानापूर्वक कौशल का परिचय देते रहे। जयदेव ने जिन कलाओं का प्रदर्शन किया, प्रताप ने उनकी प्रतिक्रियाएँ कीं। लेकिन अंत में जयदेव ने प्रताप के हाथ की तलवार को उड़ा दिया।

प्रताप ने आश्चर्य में आकर कहा—"मैं तो यह कला बिलकुल नहीं जानता हूँ।"

जयदेव ने प्रताप के कंधे पर हाथ सहलाते कहा—"मेरे दामाद! तुम्हें एक-दो और कलाएँ भी सीखनी हैं। उन्हें मैं दहेज के रूप में तुमको प्रदान करूँगा। तुम अपने देश को खबर भेज दो कि तुम्हारा सारा परिवार तुम्हारे विवाह में भाग लेने के लिए आ जाये।"

एक शुभमुहूर्त में प्रताप और चारुमति का विवाह संपन्न हुआ। कोसल और विदेह राज्य एक हो गये। कालांतर में प्रताप ही दोनों राज्यों का राजा बना और इस तरह अपने पिता की अंतिम इच्छा की पूर्ति की।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, मेरा एक संदेह है। जयदेव ने प्रताप को द्वन्द्व-युद्ध में पराजित किया। फिर भी उसे अपना दामाद बनाने का

निश्चय क्यों किया? क्या इसलिए कि उसकी पुत्री प्रताप से प्रेम करती है? या यह सोचकर कि कभी न कभी वह उसके राज्य को मिटाकर रहेगा? प्रताप को अपना दमाद बनाने का निश्चय कर भी जयदेव ने उसके साथ द्वन्द्व-युद्ध क्यों किया? इन सवालों का जवाब जानते हुए भी न बताओगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"जयदेव ने द्वन्द्व-युद्ध के बाद ही अपनी पुत्री का विवाह प्रताप के साथ करने का निश्चय किया। जयदेव का विचार था कि प्रताप कायर है। प्रताप का पिता एक विख्यात कायर और भीरु है। प्रताप का चाल-चलन भी जयदेव को कायर का-सा मालूम हुआ। मगर प्रताप की बातें वीर का स्मरण दिलाती थीं। इस बात का फैसला करने जयदेव ने प्रताप के साथ द्वन्द्व-युद्ध किया। इस द्वन्द्व-युद्ध के द्वारा यह साबित हो गया कि प्रताप जयदेव के बराबर का महान वीर न हो, लेकिन वह बड़ा पराक्रमी जरूर है। उसके हार जाने के बाद भी वह अपनी हार पर दुखी न हुआ। बल्कि तलवार की लड़ाई में उसने अपरिचित नये कौशल को जयदेव में देख वह आश्चर्य में आ गया। यह एक सच्चे वीर का लक्षण है। इसीलिए जयदेव ने अपनी पुत्री का विवाह प्रताप के साथ करने का निश्चय किया। किसी भी दृष्टि से देखा जाय, विदेह भानुमति के पति को ही प्राप्त होगा। लेकिन जयदेव को यही निर्णय करना था कि प्रताप भानुमति के योग्य पति है या नहीं? यह बात द्वन्द्व-युद्ध के द्वारा साबित हो गयी।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

योगी से भोगी

पुराने ज़माने में प्रस्था में विपुल्क नामक नगर पर एक बादशाह राज्य करता था। एक बार पड़ोसी राजा ने उस राज्य पर हमला किया। तब बादशाह ने यह मनौती की कि अगर उसे लड़ाई में विजय मिले तो वह देश-भर के भक्तों में सोने के फूल व फलों का दान करेगा।

लड़ाई में बादशाह की जीत हुई। पड़ोसी राजा बुरी तरह से हार गया। उस खुशी में बादशाह ने यह आदेश दिया कि खजाने में जो कुछ सोना है, उसे गलाकर सोने के फूल व फल तैयार करें। इसके बाद अपने वज़ीर को बुलाकर कहा—"सोने के फल व फूल पाने के लिए देश-भर के भक्तों के पास निमंत्रण भेज दो।"

वज़ीर ने बड़ी अदब के साथ कहा—"जहाँपनाह! आप की आज्ञा का पालन करूँगा।"

वज़ीर बड़ा होशियार और समझदार था। उसने सोचा कि बादशाह के सोने का दान करने से सारा खज़ाना खाली हो जायगा। खज़ाना खाली होते ही पड़ोसी राजा फिर अपनी फौज लेकर राज्य पर टूट पड़ेगा और इस बार बड़ी आसानी से बादशाह को जीत लेगा।

इसलिए वज़ीर ने निश्चय किया कि कोई न कोई उपाय करके दान को रोक देना चाहिये।

दो-तीन दिन बीत गये। चौथे दिन वज़ीर ने बादशाह के दर्शन करके अर्ज किया—"हुजूर! मैंने सारे देश को छान डाला, मगर मुझे एक भी भक्त दिखायी न दिया।"

"यह कैसी अचरज की बात है! क्या तुमने ठीक से भक्तों को ढूँढा? मेरी जानकारी में हमारे राज्य में एक हज़ार भक्त हैं।" बादशाह ने वज़ीर से कहा।

शिशिर प्रभाकर
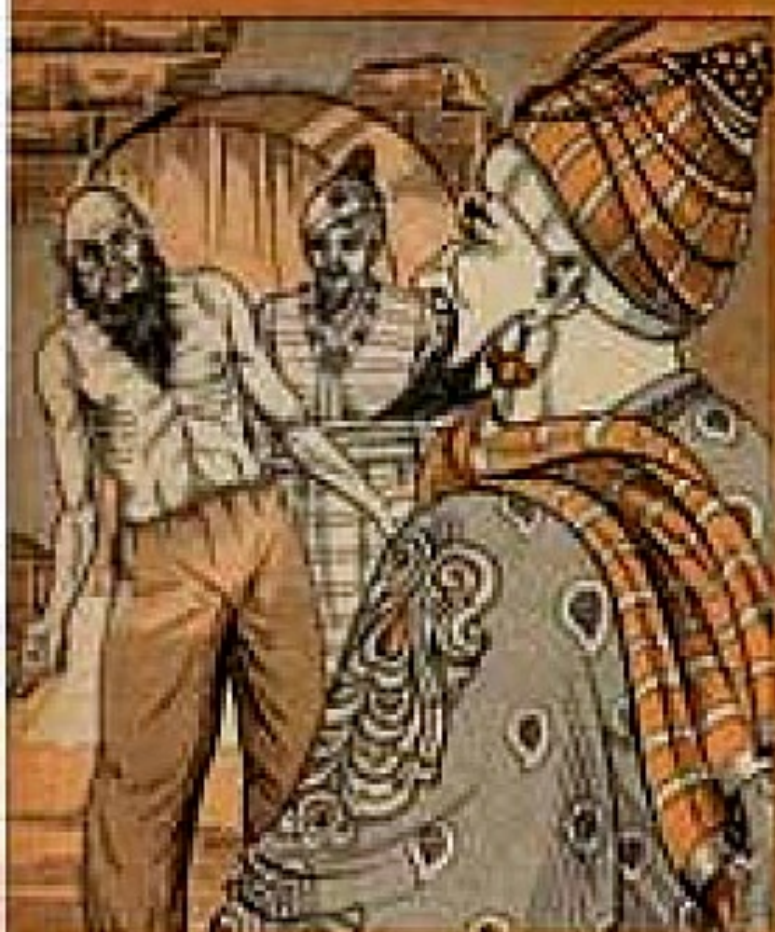
"जहाँपनाह! सच्चे भक्त सोने का दान नहीं लेते, जो दान लेते हैं, वे सच्चे भक्त नहीं हैं।" वज़ीर ने जवाब दिया।

इस पर बादशाह ने हँसकर कहा—"मालूम होता है कि मेरा दान करना तुमको पसंद नहीं है। लेकिन तुम जो बताते हो, वह सच नहीं है। तुम यह साबित करो कि जो दान लेते हैं, वे सच्चे भक्त नहीं हैं।"

"जी हुज़ूर! आप की इजाज़त हो तो मैं ज़रूर साबित करूँगा।" वज़ीर ने कहा।

"हमारे शहर की उत्तरी दिशा में जो रेगिस्तान है, उस में एक बड़ा तपस्वी है। कई सालों से वह कंद-मूल व फल खाकर अपने दिन काटता है। तुमको साबित करना होगा कि वह भक्त नहीं है।" बादशाह ने कहा।

वज़ीर ने मान लिया।

बादशाह एक मौलवी को साथ लेकर रेगिस्तान वाले तपस्वी के पास गया। तपस्वी प्रार्थना में लीन था। प्रार्थना के पूरा होने के बाद बादशाह ने उनसे पूछा—"महात्मन! अगर आपको कोई एतराज़ न हो तो आपको हमारे शहर में पधारना होगा। वहीं पर हम आपके लिए एक आश्रम बनवायेंगे। आप की तपस्या के लिए ज़रूरी सारी सुविधाएँ हम करेंगे। आपको किसी भी बात के लिए तकलीफ़ उठाने की ज़रूरत न पड़ेगी। आपकी तपस्या बेरोक-टोक चलेगी। आपका सदाचार लोगों के लिए भी अनुकरणीय होगा।"

बादशाह की बातें उस तपस्वी को पसंद न आयीं। उसने अपना मुँह मोड़ लिया।

इस पर मौलवी ने तपस्वी से निवेदन किया—"महात्मन! आप बादशाह की बातों को इनकार न कीजिये। पैगंबर मुहम्मद के आचरण के यह विरुद्ध नहीं है।

आप यह बात अच्छी तरह जानते हैं। अगर आश्रम आप की तपस्या के लिए अनुकूल न हो तो आप उसे छोड़ भी सकते हैं।"

मौलवी की बातें सुनकर तपस्वी शहर में जाने को मान गया और बादशाह के साथ शहर में आया।

तपस्वी के ठहरने के लिए बादशाह के बगीचे में विशाल महल में इंतजाम किया गया। महल देखने में इंद्र भवन जैसा था। उसमें शांति विराज रही थी। उसकी सेवा के लिए अप्सराओं जैसी की दासियों को भी वजीर ने नियुक्त किया।

तपस्वी को धीरे-धीरे इस ऐश-आराम की जिंदगी में बड़ा मजा आने लगा। बहुत ही स्वादिष्ट पूर्ण भोजन, सुंदर कपड़े, मधुर भोज्य पदार्थ, वगैरह से वह आदी हुआ। अब उसका शरीर चमकने लगा। दासियों का सौंदर्य भी उसे अपनी ओर खींचने लगा। उनके वेश देख वह मन ही मन उछल पड़ता था।

वजीर की चाल चल गयी। इसलिए वह बहुत खुश हुआ। एक दिन रात को वह बादशाह को साथ लेकर गुप्त रूप से आश्रम में आया।

तपस्वी रेशमी तकियों पर अपने शरीर को फैलाये दासियों के साथ दिल को गुदगुदानेवाली बातें कर रहा था।

"हुजूर! आप देख रहे हैं न? ये कैसे महात्मा थे और अब क्या हो गये हैं? हमने भक्तों को सोना देकर उन्हें भगवान से दूर कर दिया। इसलिए मेरी सलाह है कि भक्तों के लिए धर्मशालाएँ बनवाकर उन्हें भक्त ही बने रहने दीजिये।" वजीर ने बादशाह को सलाह दी।

वजीर की सलाह के मुताबिक बादशाह ने सोने का दान करना बंद किया और सारे देश में धर्मशालाएँ खोल दी।

नौकरी छूटी

एक राजा के दरबार में एक बड़ा अधिकारी था। उसने लोगों से रिश्वत लेकर खूब धन इकट्ठा किया। इसलिए वह हर रोज भोजन के साथ छः तरकारियाँ खाया करता था।

दिन सदा एक से नहीं होते! राजा को जब इस बात का पता चला कि अधिकारी घूस लेता है, तब उसने अधिकारी को नौकरी से हटाया। इसलिए अधिकारी को अपनी पुरानी कमाई पर दिन काटने पड़े। इसलिए उसने अपने रसोइये को बुलाकर समझाया– "मेरी नौकरी छूट गयी है, इसलिए कल से तुम दो ही तरकारियाँ बनाओ।"

दूसरे दिन से अधिकारी को दो ही तरकारियाँ खाने को मिलने लगीं। फिर भी खाने के खर्च में कोई कमी न होती थी। इसका पता लगाने के ख्याल से अधिकारी ने रसोई घर में जाकर देखा, वहाँ पहले की ही भाँति छे तरकारियाँ बनती मिलीं।

"मैंने तुम से कहा था कि दो तरकारियाँ ही बनाया करो, लेकिन तुम छे तरकारियाँ क्यों बनाते हो?" अधिकारी ने रसोइये से पूछा।

"आपकी नौकरी छूट गयी, इसलिए मैं आपको दो ही तरकारियाँ परोसता हूँ, लेकिन मेरी नौकरी अभी तक नहीं छूटी, इसलिए मैं छे तरकारियाँ बनवाकर खाता हूँ।" रसोइये ने जवाब दिया। उसी दिन रसोइये की भी नौकरी छूट गयी।

अंधे की कमाई

एक गाँव में एक जुलाहा था। वह तरह-तरह के कपड़े बुनने में प्रवीण था। जब गाँव में कोई बड़ी माँग न होती, तब वह कीमती शाल बुनता और शहर में ले जाकर बेच आता।

एक बार जुलाहे ने एक सुंदर शाल बुना, उसे बेचने के लिए शहर की ओर चल पड़ा। लंबा सफ़र था। पहाड़ और टीले पार कर जाना था। एक दिन जब वह एक नदी के किनारे पहुँचा, उसे यह खिलखिलाहट सुनायी पड़ी—"अंधे का धन है। पानी में गिरता जा रहा है।"

यह खिलखिलाहट सुनकर जुलाहा किनारे पर आ पहुँचा। लेकिन वहाँ पर कोई न था। उसने देखा, नदी का कगार हिलकर बाढ़ में बहा जा रहा है, उस कगार के पत्थर में एक पुराना लोटा है। जुलाहे ने लोटे को अपने हाथ में लिया। खोलकर देखा तो उसकी आँखें चौंधिया गयीं। लोटे में सोने के सिक्के थे। उन्हें देख जुलाहा खुशी से नाच उठा। उसने लोटे के मुँह पर टीन का ढक्कन लगाया और उसे कपड़े से बाँध दिया। तब थैली में से शाल निकाल कर कंधे पर डाल लिया और लोटा थैली में रख दिया। अब उसे आगे जाना न था। इसलिए उसने घर की राह ली।

जब वह एक गाँव के निकट पहुँचा तब अंधेरा फैल गया। उसने सोचा कि वह रात उसी गाँव में बिता दे, यह सोचकर एक घर के सामने पहुँचा और दर्वाज़ा खटखटाया।

एक बूढ़ी ने किवाड़ खोलते हुये पूछा—"बेटा, तुम कौन हो और क्या चाहते हो?"

"आज रात को मुझे बरामदे में सोने दो। खाना भी खिलाओगी तो

[illegible] दुबे

मैं तुम्हें एक रुपया दूंगा।" जुलाहे ने कहा।

"यह कौन बड़ी बात है, बेटा! खाना खिलाऊंगी। जा कर बरामदे में सो जाओ।" बुढ़ी ने कहा। जुलाहे ने एक रुपया देकर उसे खाना खिलवाया।

जुलाहे ने बरामदे में लेटते वक्त सोचा कि उसके पास सोना रखना ठीक नहीं है। कोई रात को चुरा ले जायगा। यह सोचकर बुढ़ी को बुलाया और कहा— "बुढ़ी माँ! देखो, इस लोटे में एरंडी का तेल है। इसे बड़ी सावधानी से छिपा रखो। कल सुबह मैं ले जाऊँगा।"

"अच्छी बात है, बेटा!" यह कहकर बुढ़ी ने लोटा ले जाकर घर में छिपा दिया। किवाड़ बंदकर बुढ़ी सो गयी।

अचानक उसी रात को बुढ़ी की पुत्री का प्रसव हुआ। घर में ढूंढा तो कहीं तेल की एक बूंद भी न मिली। बुढ़ी को झट याद आयी कि मुसाफिर के दिये हुये लोटे में तेल है। उसने थैली में से लोटा निकाला। कपड़ा खोल कर ढक्कन निकाला तो सोने के सिक्के देख वह चौंक गयी। उसने सोचा कि लड़के के प्रसव का नक्षत्र बड़ा जबर्दस्त है, इसीलिए यह सोना मिला है। यह सोचकर उसने सोने के

सिक्के बड़ी सावधानी से छिपा दिये। तब पिछवाड़े की राह से जाकर पड़ोसिन को जगाया, सेर भर तेल उधार में लायी। लोटा-भर तेल डाल दिया। फिर ढक्कन रखकर कपड़े से उसे बांध दिया। उसे यथा प्रकार थैली में रखकर बाकी तेल से अपना काम चलाया।

दूसरे दिन सबेरे जुलाहे ने बुढ़ी से मांगकर अपनी थैली ले ली और अपना घर चला गया। जुलाहे की पत्नी ने उसके कांधे पर थान देखकर पूछा—"थान को बेचे बिना तुम कैसे घर लौट आये?" "पहले किवाड़ तो बंद करो, देखोगी कि मैं कितना सोना लाया हूं।" ये शब्द कहते जुलाहे ने थैली में से लोटा निकाला, खोलकर देखा। लोटे में तेल भरा था।

"बुढ़ी शैतान ने कैसे दगा दिया! यह उसी का काम है। उसको छोड़ किसी ने इस लोटे को छुआ तक नहीं।" ये शब्द कहते जुलाहे ने सारी बातें अपनी औरत को समझायीं और कहा—"मैं अभी जाकर उस बुढ़ी की खबर लेता हूं।" उसी वक्त वह बुढ़ी के गाँव के लिए रवाना हुआ। बुढ़ी ने जुलाहे को देख पूछा—"क्यों बेटा? फिर लौट आये हो? कुछ भूल तो नहीं गये हो?"

"क्या तुम यह सोचकर लोभ में पड़ी हुयी हो कि मेरे पास एक और लोटे भर सिक्के हैं?" जुलाहे ने क्रोध से पूछा।

"सोने के सिक्के कैसे, बेटा?" बूढ़ी ने भोलेपन का परिचय देते हुए पूछा।

"बेचारी तुम क्या जानती हो? मेरे लोटे भर सिक्के हड़पकर उसमें तुमने तेल डाल दिया है न?" जुलाहे ने कहा।

"अरे बेटा! तुम्हीं ने तो कहा था कि उस लोटे में तेल है? अब उस में सोने के सिक्कों की बात कहकर तुम मुझे चोर ठहराते हो? जरा संभल कर बोलो तो।" बूढ़ी ने गरज कर कहा।

उन दोनों को झगड़ा करते देख अड़ोस-पड़ोस के लोग जमा हो गये। सब ने बूढ़ी की बातों का ही समर्थन किया। उन में से कुछ लोगों ने जुलाहे को डांटना शुरू किया–"तुम्हें लोटे भर सोने के सिक्के कहाँ से मिले? लोटे में सिक्के डालकर तुमने उसे तेल क्यों बताया? तुम्हारा रवैया देखने से तुम चोर मालूम होते हो!"

जुलाहा सोच ही रहा था कि जहाँ उसका कोई गवाह नहीं है, वहाँ उसे न्याय न मिलेगा। इतने में एक औरत बोल उठी–"देखो, बेटा! यह बूढ़ी अभी रो रही है कि उसके एक अंधा पोता पैदा हुआ है, उस पर चोरी का भी इल्जाम क्यों लगाते हो?"

जुलाहा चकित रह गया। उसे लोगों की बातचीत से मालूम हुआ कि जिस दिन रात को वह बूढ़ी के घर के बरामदे में सोया था, उस रात को बूढ़ी की बहू का प्रसव हुआ और जो लड़का पैदा हुआ, वह जन्मजात अंधा है।

"और क्या? यह सोना उसी अंधे लड़के का होगा। मैं सिर्फ यह सोना उसे पहुँचाने के काम में आया।" यह सोचकर जुलाहे ने फिर अपने घर की राह ली।

जलदेवी

प्राचीन काल में ग्रीस देश में एक राजकुमार था। वह विवाह नहीं करना चाहता था। राजा ने समझाया, "बेटा, मेरे बाद तुम्हीं इस देश के राजा बनोगे, इसलिए विवाह करो।" पर उसने इनकार किया।

माँ ने गिड़गिड़ाकर कहा—"मेरे लाल! बच्चों के कमरे सब खाली हैं। शादी कर लो! हमारा महल बच्चों के कोलाहल से शोभायमान रहेगा।"

इस पर भी राजकुमार ने न माना। रानी ने सोचा कि उसका पुत्र किसी किसान की लड़की से प्यार करता होगा! इसलिए कहने में संकोच करता है। चाहे वह किसी जात की क्यों न हो, सुन्दर होगी। बुद्धिमती लड़की हो तो कोई बात नहीं।

राजमहल के सामने एक किसान का घर था। उस घर के चारों ओर बगीचा था। उस बगीचे में तीन लड़कियों को गेन्द खेलते रानी ने देखा। तीनों लड़कियाँ सुंदर थीं। राजकुमार उन तीनों में से किसी एक से जरूर प्यार करता होगा।

रानी ने बड़ी लड़की को बुलाकर कहा—"बेटी! मुझे शक है कि राजकुमार ने तुमसे प्यार किया है। अगर यह बात सच है तो तुमको अपनी बहू बनाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।"

रानी उस लड़की को राजकुमार के कमरे में ले गयी। सोफा पर बिठाकर चली गयी। थोड़ी देर बाद राजकुमार उस कमरे में आ पहुँचा। उसने उस लड़की की ओर आँख उठाकर भी न देखा। मेज पर बैठकर थोड़ी देर कुछ लिखता रहा, फिर चला गया। यह सोचकर वह किसान की लड़की वहीं पर बैठी रही कि उसके चले जाने से न मालूम रानी क्या कहेगी। वह वहीं पर सो गयी।

ग्रीक की लोक कथा

जब वह लड़की नींद से जाग उठी, सवेरा हो चुका था। रानी ने आकर उससे पूछा—"बेटी, क्या हुआ?"

"युवराज आये, कुछ लिखकर चले गये। मुंह से कुछ बोले तक नहीं।" किसान की लड़की ने उत्तर दिया।

रानी ने उस लड़की को कोई इनाम देकर भेज दिया। तब दूसरी लड़की को बुला भेजा। दूसरी लड़की का भी वही अनुभव था जो बड़ी के साथ हुआ था। राजकुमार ने दूसरी लड़की की ओर भी न देखा और न उससे बातचीत की।

तीसरे दिन रानी ने तीसरी लड़की को बुला भेजा और वे ही बातें कहीं, जो बातें पहले की दो लड़कियों से बतायी थीं। तीसरी लड़की बड़ी होशियार थी। उसने रानी से बताया—"क्या मैं इन मामूली कपड़ों को पहनकर युवराज के सामने जाऊं? यह अच्छा न होगा!"

रानी ने उस लड़की को रत्न जड़े कपड़े पहनाकर कहा—"अरी, तुम बड़ी सुन्दर हो! जरूर तुम मेरी बहू बनोगी!"

"इससे विचित्र बातें न होंगी न?" तीसरी लड़की ने पूछा।

जब वह कमरे में सोफा पर बैठी थी, तभी राजकुमार आया। वह उस लड़की की ओर आंख उठाकर देखे बिना मोमबत्ती जलाकर कुछ लिखने लगा। कमरे में एक कोने में एक मैना सो रहा था।

"युवराज का शुभ हो!" किसान की लड़की ने कहा। पर युवराज उत्तर दिये बिना लिखने में निमग्न हो गया।

"क्यों मैना? तुम भी बोलोगे कि नहीं?" लड़की ने पूछा।

सोनेवाले मैना ने कोई उत्तर न दिया।

"मोमबत्ती! मोमबत्ती! क्या तुम भी मेरे सवाल का जवाब न दोगी?"

राजकुमार ने अपनी कलम नीचे रखकर क्षोभ भरे स्वर में पूछा—"मोमबत्ती! मोमबत्ती! तुमको क्या चाहिये?" यह कहकर वह उस झुंझलाहट में उस लड़की की ओर देखे बिना कमरे से चला गया। किसान की लड़की सोफ़ा पर ही सो गयी।

दूसरे दिन रानी ने आकर पूछा—"क्या हुआ है री?"

"महारानीजी! और क्या है। युवराज आये, मुझसे पूछा कि तुम को यहाँ कौन ले आये हैं? मैंने कहा—'महारानीजी ले आयी हैं।' इस पर वे सोफ़ा पर बैठे। अपने हाथ में मेरे हाथ को लेकर काफ़ी देर तक बातचीत की।" किसान की लड़की ने कहा।

रानी को परमानंद हुआ। रानी ने उस लड़की को दूसरे दिन भी वहीं पर रह जाने का आदेश दिया। किसान की लड़की रत्न खचित वस्त्र पहने राजमहल के गवाक्ष के पास बैठ गयी।

उस लड़की की बहनों ने आकर पूछा—"अरी, क्या तुम घर न जाओगी?"

"नहीं, महारानीजी मुझे जाने नहीं देंगी।" छोटी बहन ने जवाब दिया।

"क्या युवराज ने तुमसे बातचीत की?" उन लड़कियों ने फिर पूछा।

"क्यों नहीं, हमने कई बातें कीं।" छोटी ने उत्तर दिया।

बड़ी बहनों को छोटी बहन पर ईर्ष्या हुई। उन्होंने सोचा—'वह झूठ बोल रही है।' इसके बाद वे एक व्यापारी के पास गयीं, एक मोतियों की माला ले आयीं। उसे छोटी बहन को दिखाते बोलीं—"यह माला बिक्री के लिए आयी है। क्या युवराज इसे तुम्हें खरीद कर देगा?"

"मेरे हाथ दे दो। मैं उनसे पूछकर बताऊँगी।" छोटी ने बताया।

उस रात को जब युवराज कमरे में आया, तब छोटी बोली—"मोमबत्ती! मेरी बहनें मोतियों की माला ले आयी हैं। क्या उसे खरीदूं या नहीं?"

राजकुमार ने लिखते हुये ही उत्तर दिया—"मोमबत्ती! मोमबत्ती! अलमारी में चाबियाँ हैं और उसके दराजों में सोने के सिक्के हैं। जितने चाहो, ले लो।" यह बात कहकर राजकुमार उस छोटी लड़की की ओर देखे बिना बाहर चला गया।

छोटी लड़की ने दराज खोल कर मुट्ठी भर सिक्के लिये। दूसरे दिन उसने रानी से बताया कि मोतियों की माला खरीदने राजकुमार ने उसे सोने के सिक्के दिये हैं। रानी ने उस लड़की को एक और दिन वहाँ ठहरने का आदेश दिया।

किसान की लड़की ने अपनी बड़ी बहनों को बुला भेजा और उनके हाथ सिक्के देते हुये मोतियों के व्यापारी को देने की बात कही।

'यह लड़की तो धूर्त है। रानी ने ही उसे सोने के सिक्के दिये होंगे।' बड़ी बहनों ने मन में सोचा।

"क्या तुम सचमुच युवराज से शादी करने जा रही हो?" बड़ी बहन ने पूछा।

"इससे भी विचित्र बातें क्या नहीं हो सकतीं?" छोटी ने उत्तर दिया।

"अगर तुम इस राजमहल में ही रहकर युवराज के साथ शादी करने जा रही हो तो एक बार हम दोनों को दावत में बुला कर हमें देवर का परिचय क्यों नहीं कराती?" बड़ी बहनों ने पूछा।

"आज रात को मैं उनसे पूछ लूँगी। वे मान जायेंगे तो ऐसा ही इंतज़ाम करूँगी।" छोटी ने कहा।

मगर बड़ी बहनों के चले जाने के बाद वह रोती बैठी रही। वह दिन-भर रोती ही रह गयी। राजकुमार जब कमरे में आया, तब भी वह रो रही थी। "मोमबत्ती! ओह मेरी मोमबत्ती।" पुकारते वह दहाड़ें मारकर रो पड़ी।

"यहाँ आ जाओ, मोमबत्ती! रोती क्यों हो?" राजकुमार ने लिखते हुये ही कहा।

वह युवराज की मेज़ के पास खड़ी हो गयी। पर उसने सर उठाकर न देखा।

"मोमबत्ती! मैं बड़ी मुसीबत में फँस गयी हूँ। मेरी बड़ी बहनें दावत में आना चाहती हैं। उन्हें बुलाने का अधिकार मुझे नहीं है। मैं यहाँ की एक गुलाम हूँ। मेरी बहनों के सामने मेरा अपमान होगा। यही सोचकर रोती हूँ।" छोटी ने कहा।

युवराज ने लिखते हुये ही उत्तर दिया—"तालाब में बतखें हैं। जंगल में हिरनें हैं, राजदरबार में शिकारी हैं। रसोई बनाने के लिए रसोइये हैं। दावत करो, मोमबत्ती।"

ये बातें कहकर युवराज ने कलम मेज़ पर रख दी और बाहर चला गया।

छोटी ने जब यह बात रानी को सुनायी, तब रानी ने दावत का इंतज़ाम किया। किसान की लड़की ने अपनी बड़ी बहनों को न्योता दिया। फिर भी इससे समस्या हल न हुई। उनके साथ बैठकर राजकुमार के भोजन न करने का कोई बहाना बताना

होगा। इसके लिए नाटक रचने का उस लड़की ने पहले ही जरूरी इंतजाम किया।

बड़ी बहनें अपने पास की अच्छी पोशाकें थीं, उन्हीं को पहन कर दावत में आयीं। युवराज का पता नहीं था। बड़ी बहनों को संदेह ही था। रानी को लगा कि उसके पुत्र की शादी निकट है।

"क्या दावत में युवराज नहीं आ रहे हैं?" दूसरी बहन ने कहा।

"क्यों नहीं? जरूर आयेंगे। शिकार खेलने गये हैं। उनके आने का वक्त हो गया है।" छोटी ने बताया।

थोड़ी देर बाद बाहर घोड़े की टापों की आवाज हुई। यह आहट करनेवाला व्यक्ति छोटी के द्वारा नियुक्त एक नौकर ही था। उसने ऊपरी मंजिल में आकर किसान की लड़की से कहा—"युवराज, आपको दो मिनट के लिए नीचे बुला रहे हैं। कोई जरूरी बात कहना चाहते हैं।"

किसान की लड़की नीचे चली गयी। वहाँ पर युवराज न था। वह खुद जानती न थी कि युवराज कहाँ रहता है। उसकी समझ में न आया कि क्या करना चाहिये। वह नीचे उतरी तो भूगर्भ में एक कमरा दिखाई दिया। वहाँ पर वह परेशानी के साथ टहल ही रही थी कि उसके पैरों के नीचे एक पटरी हिल गयी। छोटी लड़की ने उस पटरी को उठा कर देखा। उसके नीचे सीढ़ियाँ थीं, उस अंधेरे में सीढ़ियों से उतर कर और नीचे गयी। सीढ़ियों के पास एक दालान था। उस दालान से होकर आगे बढ़ी तो एक झोंपड़ी दिखाई दी। उसके फर्श पर तोशक फैल गये थे। उस पर लेटकर राजकुमार गहरी निद्रा में निमग्न था। उसकी बगल में एक नारी सो रही थी। वह

मानवी न थी, बल्कि जल जाति की देवी थी। दोनों के बीच एक सुंदर शिशु सो रहा था। तीनों के गलों से लगकर मोसक फैले थे। किसान की लड़की के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

इस दृश्य को देख किसान की लड़की जल्दी जल्दी सीढ़ियाँ चढ़कर राजमहल की पहली मंजिल में आ गयी। उसने रानी से कहा—"युवराज किसी के शिशु का नामकरण करानेवाले हैं! तीन जरीदार रेशमी वस्त्र, बच्चे के लिए एक मखमलवाला तकिया और एक चांदीवाली कंघी चाहते हैं। कहते हैं कि उनके लौटने में देरी हो जायगी। इसलिए हम लोग भोजन करें।"

बड़ी बहनों को साफ़ मालूम हुआ कि उनकी छोटी बहन उन्हें दगा दे रही है। रानी ने पल भर में सारी चीज़ें लाकर किसान की लड़की के हाथ दीं। उन्हें लेकर फिर वह उसी झोंपड़ी में पहुँची। सोनेवाले शिशु को उठाकर उसने मखमली तकिये पर लिटाया। कंघी से उसके बाल सँवारकर उस पर रेशमी वस्त्र ओढ़ दिया। इसके बाद उसने युवराज और जल देवी के बाल सँवारा। उन पर भी रेशमी वस्त्र ओढ़कर मोसक सब

हटाये। तब वह फिर अपनी बड़ी बहनों के पास लौट आयी। सब ने मिलकर भोजन किया।

जलदेवी ने नींद से उठकर देखा, उनपर रेशमी वस्त्र ओढ़े गये हैं। उसके शिशु के बाल सँवारे गये हैं। उसने सर पर हाथ रखकर देखा तो आश्चर्य हुआ कि उसके बाल भी सँवारे गये हैं। इसके बाद राजकुमार को जगाकर उसने पूछा—"युवराज! तुम किससे प्यार करते हो! तुम से कौन युवती प्यार करती है? यहाँ पर पहुँचकर किसने यह सब किया है?"

"मैं नहीं जानता कि मुझसे कोई प्यार करती है, और न मैं किसी से प्यार करता हूँ। तुम्हारे जादू का जब से मैं शिकार हो गया, तब से मैं ने किसी नारी का चेहरा तक नहीं देखा है। मैं केवल तुम्हारे वास्ते ही जीता हूँ।" युवराज ने कहा।

"तुम इस बात का पता लगा कर लौट आओ कि वह नारी कौन है?" जलदेवी ने कहा। इसके बाद झोंपड़ी में एक बवंडर उठा। उस वायु में जलदेवी और उसका शिशु दोनों गायब हो गये।

राजकुमार सीढ़ियाँ पार कर राजमहल में आया। सारा दिन उसे लगा कि वह पागल हो गया है। रात को उसने अपने कमरे में जाकर देखा, किसान की लड़की रोती बैठी हुई है। पहली बार उसने उस लड़की की ओर देखा। वह बड़ी सुंदर थी।

युवराज ने किसान की लड़की का हाथ पकड़कर कहा—"रोओ मत, तुमने जो कुछ देखा, किसी से मत कहो। तुमने उस जलदेवी से मेरी रक्षा की। चलो, हम मेरे माता-पिता के पास जाकर उन से पूछेंगे कि वे कल ही हम दोनों के विवाह का प्रबंध करें।"

पंच व्याघ्र द्वार

सैकड़ों वर्ष पूर्व चीन देश में एक गरीब युवक रहता था। वह लकड़ी काटकर बेचता और उसे बेचकर अपने और अपनी माँ का पेट पालता था।

जाड़े के दिन थे। एक शाम को वह पहाड़ की तलहटी में लकड़ी काटता था। उस वक्त उसे पास में ही बाँसों की झुरमुट में से पीड़ा से भरी एक कराहट सुनाई दी। झाड़ी इतनी घनी थी कि उसे भीतर का भाग दिखाई न देता था।

युवक कुल्हाड़ी को कंधे पर रखे बाँस की झाड़ी के नजदीक पहुँचा। कराहट और साफ़ सुनायी दी। पर भीतर का प्राणी दिखाई न पड़ा। इसलिए उसने बड़ी सावधानी से झाड़ी में प्रवेश किया। वह झाड़ी पाँच साल पूर्व काटी गयी थी। बाँसों के कतरन छुरी से भी ज्यादा पैने थे। उन पर पैर पड़ता तो छिल जाता।

लकड़हारे को झुरमुट के भीतर एक लोमड़ी दिखायी दी। उसके पैर में बाँस का कतरन चुभ गया था। इसलिए वह हिलने की हालत में न थी। पीड़ा से कराह रही थी। पहले लोमड़ी को देख लकड़हारा डर गया, लेकिन लोमड़ी की दीनता भरी दृष्टि को देख उसका दिल पसीज उठा।

वह झट झाड़ी से बाहर आया, पहाड़ से उतर कर घर की ओर भागा। माँ सामने आयी। उसकी घबराहट को देख माँ ने इसका कारण पूछा तो लकड़हारे ने उत्तर दिया—"माँ, पहाड़ पर बेचारी एक लोमड़ी घायल हो कराह रही है। उसकी रक्षा करेंगे। क्या तुम मेरे साथ चलकर मदद करोगी?"

"अच्छी बात है, बेटा! ठहरो, मैं घावों पर लगाने के लिए दवा ले आती हूँ।" माँ ने जवाब दिया।

चीनी लोक कथा

दोनों शेरनी के पास पहुँचे। माँ शेरनी को सांत्वना के शब्द बता रही थी, पुत्र ने बड़ी ही होशियारी से शेरनी के पैर से बांस की तीली निकाला। पीड़ा से विमुक्त होने पर शेरनी ने अपनी क्रूरता नहीं दिखायी, बल्कि माँ-बेटों की ओर कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि डाली। लकड़हारे की माँ ने शेरनी के पाव पर दवा लगायी, दो कदम पीछे हट कर उससे विदा लेने के विचार से बोली—"शेरनी माई! हम गरीब हैं। मेरे बेटे को कोई लड़की देने को तैयार नहीं है। तुम्हारी दृष्टि में अगर कोई अच्छी लड़की हो, तो मेरे बेटे का घर बसाओ। तुम्हारा पुण्य होगा!" ये शब्द कहकर वह औरत अपने लड़के के साथ घर लौट आयी।

जाड़े के दिन अभी पूरे न हुये थे। एक दिन कुछ लोग एक अमीर की लड़की को दुलहिन बनाकर उस पहाड़ की तराई में स्थित उसके होनेवाले ससुराल में ले जा रहे थे। दुलहिन पालकी में बैठी थी। आगे-पीछे कहार तथा पेटी और कांवरी ढोनेवाले चल रहे थे।

अचानक उन लोगों ने देखा कि रास्ते में पाँच शेर बैठे गुर्रा रहे हैं। कांवरी, पालकी तथा पेटियों को वहीं पर छोड़ सब लोग डर के मारे भाग खड़े हुये। दुलहिन ने घबराकर पालकी के किवाड़ खोलकर देखा। वहाँ पर उसके अलावा पाँच शेर रास्ता रोके बैठे हुये थे।

एक घंटे भर बाद लकड़हारे के दर्वाजे को किसीने खटखटाया। उस जवान ने जाकर दर्वाजा खोला। एक सुंदर दुलहिन बाहर खड़ी थी। उसके पीछे पाँच शेर दिखाई पड़े। उसे लगा कि वे शेर मुस्कुरा रहे हैं!

कुछ दिन बाद लकड़हारे ने उस युवती से शादी की। वह युवती अपने पति और

सास के प्रति श्रद्धा का भाव रखते उसकी सेवा करने लगी। उनकी ज़िंदगी मज़े में कटने लगी।

लेकिन दुल्हिन के पिता को असली बात का पता लग गया। उसका गाँव पहाड़ के उस पार था। वह बड़ा अमीर था। उसकी धाक दूर तक फैली हुई थी। उसने गुस्से में आकर न्यायाधिपति के पास जाकर शिकायत की कि लकड़हारे ने तथा उसकी माँ ने मिलकर उसकी लड़की का अपहरण किया है। न्यायाधिकारी ने लकड़हारे तथा उसकी माँ को अदालत में बुला भेजा।

लकड़हारे ने अदालत में कहा—"मैं ने अमीर की लड़की का अपहरण नहीं किया है, उसे चोरों ने लाकर मेरे घर में छोड़ दिया है।" किंतु न्यायाधीश ने इस बात पर विश्वास न किया। उसने अपने भटों को आदेश दिया—"यह लकड़हारा जब तक अपनी गलती को स्वीकार नहीं करता, तब तक इसे लाठियों से पीटते जाओ। अगर यह सच नहीं बतलायेगा, तो इसके मरने तक पीटो।"

इस पर लकड़हारे की माँ न्यायाधीश के पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाते बोली—"सरकार, मेरा बेटा सच बोलता है, आप चाहेंगे तो मैं चोरों को गवाह ला सकती हूँ।"

बुढ़ी की बात न्यायाधीश को विचित्र जान पड़ी। वह बोला—"अच्छी बात है! तुम गवाहों को लेते आओ। मैं तब तक सजा रोक देता हूँ।"

बुढ़ी चली गयी। थोड़ी देर बाद वह पाँच शेरों को साथ लेकर लौट आयी। शेरों को देख अदालत में बैठे सब लोग भाग खड़े हुये। न्यायाधीश ने एक ऊँची मेज पर खड़े हो काँपते हुये स्वर में पूछा—"तुम्हीं लोग गवाह..." वह पूरी बात बोल भी न पाया।

शेरों ने इस तरह सर ऊपर-नीचे हिलाया, मानों न्यायाधीश की बात उनकी समझ में आ गयी हो। न्यायाधीश का फैसला हो गया। लकड़हारा अपनी माँ के साथ घर लौट आया।

उसी साल गरमी के दिनों में हजारों जंगली लोगों ने उस राज्य पर हमला किया। उनके साथ शिकारी कुत्ते, भालू और बानर भी थे। राजा की फौज उन जंगली लोगों पर टूट पड़ी। लेकिन उनके सामने फौज की एक न चली। ऐसा लगा कि राजा का घोर अपमान होनेवाला है। राजा एक दम परेशान हो उठा। उस हालत में किसी ने राजा को लकड़हारे के शेरों की कहानी बतायी। उसने लकड़हारे को बुलाकर कहा—"अगर तुम दुश्मन को भगा दोगे तो मैं तुमको अपना प्रधान सेनापति बनाऊँगा।"

फौज के योद्धाओं, भेरियों तथा कवचों को देख न डरनेवाले जंगली लोग पाँच बड़े बड़े शेरों को देख डर के मारे भाग खड़े हुये। राजा की इज्जत बच गयी। राजा ने लकड़हारे को शासन सम्बन्ध प्रधान सेनापति के पद पर नियुक्त किया और उसे "पंच व्याघ्र भूप" नामक उपाधि भी दी। उस दिन से लकड़हारे का अच्छा आदर होने लगा।

असली परीक्षा

एक भिखारी था। वह गाँव-गाँव घूमकर भीख माँगा करता था। एक बार वह बहुत दूर तक भूखे ही यात्रा करके आखिर एक गाँव में पहुँचा। वहाँ पर उसे एक बहुत बड़ा घर दिखायी पड़ा। उसने सोचा कि इतने बड़े घर में उसे मुट्ठी भर खाना ज़रूर मिल जायगा।

सिंहद्वार के पास पहरेदार दिखायी पड़ा। उसकी आशा बंध गयी।

"भैया! भूख से मरता जा रहा हूँ। मुट्ठी भर खाना दिलाओ।" भिखारी ने पहरेदार से पूछा।

"मेरे मालिक भूख से मरनेवालों के इंतज़ार में ही बैठे हुए हैं। मेरे साथ अन्दर चलो।" ये शब्द कहते भिखारी को भीतर ले गया और उसे मालिक के सामने खड़ा किया।

"तुमको क्या चाहिये?" मालिक ने भिखारी से पूछा।

"मैं दो दिनों से भूखा हूँ। मुझे भूख लगी रही है। बस, केवल मुट्ठी भर खाना दिलाइये। आपका पुण्य होगा।" भिखारी ने कहा।

"ज़रूर! ज़रूर!...अरे, यहाँ कौन है? हाथ-मुँह धोने पानी लेते आओ। बरामदे में पीढ़ा और पत्तल लगाओ।" मालिक चिल्ला उठा।

नौकरों ने आकर बरामदे में पानी छिड़कने, पीढ़ा बिछाने व पत्तल डालने का अभिनय किया, लेकिन वे अपने साथ पानी, पीढ़ा व पत्तल न लाये। फिर भी मालिक बोल उठा—"देखो, इस लोटे से हाथ-मुँह धोकर उस पीढ़े पर बैठ जाओ।"

भिखारी को पल-भर लगा कि उसका दिमाग खराब होता जा रहा है, उसे आश्चर्य भी हुआ। फिर उसने सोचा कि उस घर का मालिक उसके साथ मज़ाक

शरद कुमार

कर रहा है, उसने भी उसके अनुकूल अभिनय करने का निश्चय किया। वह बिना लोटे के पानी के हाथ-मुँह धोकर, खाली पीढ़े पर आ बैठा।

"अरे, देखो तो, इसको पूड़ियाँ, लड्डू और खीर परोसो तो।" मालिक ने आदेश दिया। नौकर खाली तश्तरियों के साथ आये और परोसने का अभिनय करके चले गये। एक खाली गिलास भी उसके सामने रखा गया।

भिखारी ने उन सब पदार्थों को खाने व पानी पीने का अभिनय किया। उसके चेहरे पर निराशा के भाव बिलकुल प्रकट न हुए। वह शांत और गंभीर था।

"पूड़ियाँ बड़ी अच्छी बनी हैं।...कुछ और मँगवा दूँ? अरे, इसको थोड़े और लड्डू और खीर परोसो।" मालिक ने फिर आज्ञा दी।

भिखारी ने पेट पर हाथ फेरते हुए कहा—"बस, अब कुछ नहीं चाहिये, सरकार! पेट भर गया है। ज्यादा खाने से बदहज़मी होगी। आपने मेरी भूख मिटाकर मेरी जान बचायी। आपकी इस मेहरबानी को मैं कभी भूल नहीं सकता। अब मैं चला, आज्ञा दीजिये।"

इतने में उस गृहस्थ की पत्नी ने आकर कहा—"बैठ जाओ, बेटा! यह सब एक छोटी-सी परीक्षा है। मैं अब असली खाना खिलाती हूँ। मेरे पति ने मुझसे यह दाँव लगाया कि भूख में क्षमता नहीं होती। वे इस परीक्षा में हार गये। तुमने बड़ी क्षमता दिखायी।"

उस औरत ने भिखारी को असली पूड़ियाँ, लड्डू और खीर पेट भर खिलाया और जब भिखारी सचमुच संतुष्ट हुआ, तब उसे विदा किया।

अंतर कैसा?

पुराने ज़माने में एक राजा था। वह प्रजा को अपनी संतान मानकर राज्य करता था। प्रजा भी उसे बहुत चाहती थी। सारे राज्य में राजा का नाम फैल गया।

एक बार राजा शिकार खेलने गया। शिकार खेलते-खेलते वह बहुत दूर चला गया। वह एक भयंकर जंगल में फँस गया। उसका परिवार राजा से छूट गया था। वह भूख-प्यास से जंगल में कई दिन भटकता रहा, आखिर वह एक मुनि के आश्रम में पहुँचा।

मुनि आँखें बंदकर ध्यान में निमग्न था। राजा ने मुनि को प्रणाम किया और कहा—"महात्मन, मैं रास्ता भूलकर भूखे-प्यासे थका हुआ हूँ। क्या मुझे इस आश्रम में थोड़ी देर तक आराम करने की अनुमति दे सकते हैं?"

मुनि ने आँखें खोले बिना ही जवाब दिया—"तुम ज़रूर यहाँ आराम कर सकते हो। इस देश का राजा धर्मात्मा है। इसलिए भूख-प्यास का यहाँ पर कोई डर नहीं है। इस आश्रम का चाहे कोई फल या पत्ता खाओ तो वह बड़ा स्वादिष्ट और बलकारी होगा। तुम अपनी भूख-प्यास मिटा लो।"

राजा ने आश्चर्य में आकर पास के पेड़ का एक फल तोड़कर खाया। वह बड़ा मीठा और रुचिकर था। जो पत्ते व फल खट्टे व कडुवे होने चाहिये, वे भी मीठे थे और जल्द ही राजा की भूख मिट गई। राजा का शरीर के साथ मन भी तृप्त हुआ। वह वहीं थोड़ी देर तक विश्राम लेकर अपने महल को लौट आया।

राजधानी में लौटने पर राजा के मन में यह इच्छा पैदा हुई कि उसे अपने न्यायपूर्ण

शीला अग्रवाल

शासन की महत्ता को सारे राज्य में प्रकट करना है। उसने राज्य के सामंत, बड़े बड़े अफसर तथा प्रमुख व्यक्तियों को एक दावत में निमंत्रित किया। अपने रसोइयों को आदेश दिया कि दावत में नीम के पत्तों की चटनी, करेलों की खीर बनायें। रसोइयों ने सोचा कि राजा का उद्देश्य कोई महत्वपूर्ण होगा। यह सोचकर उन लोगों ने राजा की आज्ञा का पालन किया।

सब के साथ राजा भी भोजन करने बैठा। लेकिन वह बड़ा निराश हुआ। उसने जो जो पदार्थ बनाये थे, वे सब कड़ुवे थे। मुँह में रखते ही वमन होने लगा।

राजा ने दावत रुकवा दी। फिर अच्छे पदार्थ बनवा कर दावत दी और अपनी इज्जत बचा ली। परंतु राजा की समझ में नहीं आया कि उस दिन मुनि के आश्रम की सारी चीज़ें मीठी क्यों थीं, और आज कड़ुवे क्यों हैं? उसने सोचा कि इसमें रसोइयों की ही भूल होगी। यह सोचकर राजा ने नीम के पत्ते व करेले खाये। वे कड़ुवे ही थे। इसका मतलब था कि रसोइयों की भूल नहीं है।

इस अंतर का कारण जानने का संकल्प करके राजा खुद मुनि के आश्रम में गया और सारी बातें सुनाकर पूछा—"महात्मन, उस दिन आपके आश्रम में मैंने जो भी चीज खायी, वह स्वादिष्ट थी। आज हर चीज का अपना गुण ही क्यों है?"

"उस दिन मैंने यह जाहिर किया कि तुम राजा हो, तुम्हारी धर्मपरायणता की प्रशंसा की। इससे तुम में अहंकार पैदा हो गया। तुमने स्वयं अपनी महिमा की परीक्षा लेनी चाही। महिमाएँ आसानी से बनती हैं; किंतु परीक्षा के सामने कभी नहीं ठहरतीं।" उस दिन से लेकर राजा बड़ा विनयी बन गया।

युधिष्ठिर ने इस बीच भीम की खोज की, लेकिन कहीं उसका पता न लगा। दुर्योधन से पूछने पर बताया—"भीम तो उसी वक्त नगर में चला गया न!" युधिष्ठिर ने नगर में लौटकर कुंती से पूछा। कुंती ने घबराहट भरे स्वर में कहा—"नहीं आया बेटा, सब जगह उसकी खोज करो।"

"मैंने भीम को एक जगह सोते हुए देखा। थोड़ी देर बाद देखता हूं, वह नहीं है। सब जगह ढूंढा, कहीं दिखायी नहीं देता। न मालूम क्या हो गया?" युधिष्ठिर ने अपनी माता से कहा।

कुंती को बड़ा दुख हुआ। गद्गद कंठ में बोली—"तुम और तुम्हारे छोटे भाई चारों दिशाओं में उसे ढूंढ लो। बेटा, देरी न करो।" यह कहकर कुंती ने युधिष्ठिर को भेज दिया और विदुर को बुलवाकर कहा—"भीम सब राजकुमारों के साथ प्रमाण कोटि में गया, सब लौट आये, लेकिन वह न आया। युधिष्ठिर ने उसकी बड़ी खोज की, पर कहीं उसका पता न चला। दुर्योधन उससे जलता है। मुझे डर लगता है कि कहीं उसने भीम को मार डाला हो।"

"भाभी जी, यह बात तुम दूसरों के सामने न कहो। दुर्योधन बड़ा दुष्ट है। यह बात सुनने पर वह तुम्हारे और बेटों को जान से रहने न देगा। फिर भी तुम चिंता न करो। भीम के प्राणों का

५. द्रोण की कहानी

कोई भय नहीं है।" विदुर कुंती को सांत्वना देकर चला गया।

नागलोक में भीम आठ दिन तक सोता रहा। जब वह जाग उठा, तब नागों ने उससे कहा–"तुमने जो दिव्य रस पिया, वह अब हज़म हो गया है। इस वक्त तुम्हें एक हज़ार हाथियों का बल प्राप्त है। तुम जल्द ही अपनी माता और भाइयों से जा मिलो। वे शायद तुम्हारे लिए परेशान हों।"

इसके बाद नागों ने भीम को गंगा में नहलवाया। पहनने के लिए रेशमी वस्त्र दिये। कई औषधियों से तैयार किया हुआ पकवान खिलाया। अनेक आभूषणों से उसका अलंकार किया। तब एक नाग भीम को प्रमाण कोटि के पास में स्थित एक वन तक उठा लाया। भीम उन नागों से विदा लेकर हस्तिनापुर पहुँचा। माताजी तथा बड़े भाई को प्रणाम किया और छोटे भाइयों से गले लगाया। भीम के आ जाने से सबकी चिंता दूर हो गयी।

दुर्योधन ने कैसे उसे मार डालने के लिए भोजन में ज़हर मिलाया, हाथ-पैर बाँधकर नदी में फेंकवाया, नागलोक में उसका समय कैसे बीता, आदि सारा वृत्तांत विस्तारपूर्वक भीम ने अपनी माता को सुनाया।

उस दिन से लेकर पांडव एक दूसरे की बड़ी सावधानी से रक्षा करते रहे। दुर्योधन ने पांडवों के साथ द्रोह करने के कई प्रयत्न किये। पर विदुर ने उन सब प्रयत्नों को विफल बनाया।

भीष्म ने कृपाचार्य के पास कौरव और पांडवों के धनुर्विद्या सीखने का प्रबंध किया। कुछ समय तक कृपाचार्य के पास शिक्षा पाने के बाद भीष्म ने द्रोणाचार्य को उनका गुरु नियुक्त किया।

भरद्वाज नामक एक ऋषि का पुत्र था द्रोण। कुछ बड़े होने पर द्रोण ने वेद और वेदांगों का अध्ययन किया। धनुर्विद्या सीखने के लिए अग्निवेश का शिष्य बना। उससे द्रोण ने आग्नेय आदि अस्त्र कमाये। अग्निवेश के पास एक दूसरा शिष्य भी था। वह पृषत का पुत्र द्रुपद था। दोनों एक ही गुरु के शिष्य थे। इसलिए दोनों में अच्छी मैत्री हुई।

कुछ समय बाद पांचाल देश का राजा पृषत स्वर्गवासी हुआ, तब द्रुपद पांचाल राज्य की गद्दी पर बैठा। इस बीच द्रोण के पिता भरद्वाज का भी देहांत हो गया। द्रोण ने कृपाचार्य की बहन कृपि के साथ विवाह किया। उनके अश्वत्थामा नामक एक पुत्र हुआ।

द्रोण को अपनी गृहस्थी चलाने के लिए कमाई का मार्ग ढूँढ़ना पड़ा। उसने सुना था कि परशुराम ब्राह्मणों को मुँहमाँगा दान दे रहा है। वह भी परशुराम के पास पहुँचा। परशुराम ने द्रोण से कहा— "बेटा, मेरे पास जो कुछ था, मैंने ब्राह्मणों में बाँट दिया। मेरी सारी ज़मीन कश्यप को दे दी। इस वक्त मेरे पास केवल अस्त्र बचे हुए हैं।"

"मुझे वे अस्त्र ही दान कर दीजिये।" द्रोण ने पूछा।

परशुराम ने अपने सारे अस्त्र द्रोण को देते हुए, उन्हें चलाने व वापस लेने के तरीके भी शास्त्रीय ढंग से बताये।

इसके बाद द्रोण अपने बचपन के साथी द्रुपद के पास इस आशा से गया कि वह शायद उसकी सहायता करेगा। लेकिन राजा बनने के बाद द्रुपद घमंडी हो गया था। उसने द्रोण को देखकर कहा— "तुमको मैं बिलकुल नहीं जानता, यहाँ से चले जाओ।"
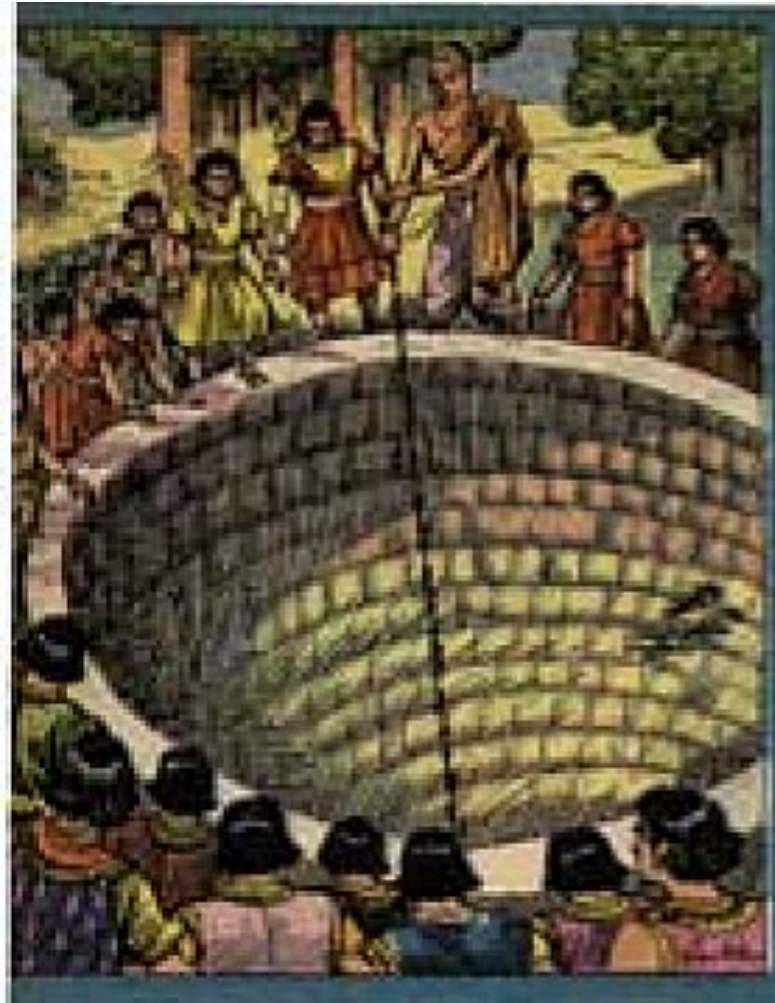
द्रुपद से अपमानित हो द्रोण हस्तिनापुर लौटा और अपने साले कृपाचार्य के यहाँ अज्ञात रूप में रहने लगा। एक दिन राजकुमार सब नगर के बाहर गेंद खेल रहे थे। गेंद जाकर कुएँ में जा गिरी। गेंद को निकालना राजकुमारों से संभव न हुआ। उसी समय द्रोण टहलते हुए उधर से आ निकला। राजकुमारों ने उसे घेरकर गिड़गिड़ाया—"आप हमारी गेंद कुएँ से निकालकर दीजिये।"

"राजकुमारो, तुम सब भरत वंश के पुत्र हो। तिस पर भी कृपाचार्य के शिष्य हो। फिर भी कुएँ से गेंद निकाल नहीं पा रहे हो? देखो, मैं अपनी इस अंगूठी को कुएँ में गिराकर, इसके साथ तुम्हारे गेंद को भी निकाल देता हूँ।" यह कहते द्रोण ने अपनी अंगूठी कुएँ में डाल दी।

तब युधिष्ठिर ने द्रोण से कहा—"बूढ़े ब्राह्मण! अगर तुम यह काम करोगे तो कृपाचार्य जी तुम्हारे जीवन-भर भोजन का प्रबंध करेंगे।"

"देखते रहो न!" यह कहते द्रोण ने धनुष और बाण लेकर ऐसा छोड़ा कि एक बाण गेंद से जा लगा। इसके बाद एक पर एक बाण छोड़ते बाणों का रस्सा बनाया और उसकी मदद से गेंद को ऊपर निकाला।

राजकुमार आश्चर्य में आ गये और बोले—"तब तो अंगूठी को भी निकालो न?"

द्रोण ने मंत्र फूँककर एक बाण छोड़ा जो अंगूठी से जा लगा। इसके बाद गेंद की तरह उसे भी बाहर निकाला।

सब राजकुमार इस अद्भुत कार्य को देख चकित हो गये। द्रोण को प्रणाम करते हुए बोले—"महाशय, हमने किसी में ऐसी शक्ति न देखी। आप कौन हैं? हम क्या आपका कोई उपकार कर सकते हैं?"

"तुम लोग बच्चे हो। मेरी हालत जानकर क्या करोगे? लेकिन यह बात तुम लोग अपने दादा भीष्म को बताओ। वे ही मेरा उपकार करेंगे।" द्रोण ने उत्तर दिया।

राजकुमारों द्वारा भीष्म ने सारा समाचार जान लिया और सादर द्रोणाचार्य का स्वागत करके पूछा—"क्या मैं जान सकता हूँ कि आपके हस्तिनापुर में आने का कारण क्या है?"

द्रोण ने अपनी सारी कहानी सुनाकर कहा—"मेरे पिता ने मुझे कृपाचार्य की बहन के साथ विवाह करने का आदेश दिया और स्वर्गवासी हुये। मैंने कृपाचार्य की बहन से विवाह किया। मेरे अश्वत्थामा नामक एक पुत्र है। उसके साथी जब गाय का दूध पी रहे थे, तब उसने भी गाय का दूध माँगा। रोया-धोया, पर मैं गाय को कहाँ से लाता? पानी में आटा मिलाकर कहता आया कि यही गाय का दूध है। मेरा पुत्र बड़ी खुशी से उसे दूध मानकर पीता आया। हमारे आश्रम में मेरी गरीबी देख सब ने मेरी निंदा की। मुझे अपने सहपाठी द्रुपद की याद आयी। बचपन में पढ़ते समय वह मुझसे कहा करता था कि उसे राज्य मिलेगा, तो मुझे दे देगा। उस से सहायता पाने के ख्याल से मैं पांचाल देश में गया। उसे पुरानी दोस्ती की याद दिलायी। राज्य के मद में द्रुपद ने कहा—एक राजा और गरीब ब्राह्मण के बीच मित्रता कैसी? यहाँ तक बताया कि मुझे वह जानता तक नहीं, चाहे तो एक जून खाना खिलाने की बात कही। मैं क्रोध में आ गया। अपनी पत्नी व पुत्र को साथ लेकर इस कुरु देश में आया। आपके बुलाने पर आया। आपके आदेश की प्रतीक्षा है!"

"आप का इस कुरु देश में आना हमारे बच्चों का भाग्य है! आप जो भी गुरु व

सुविधा चाहते हैं, मैं प्रबंध कर दूंगा। आप ही को राजा मानकर आप के आदेशों का पालन करूँगा!" यह कहकर द्रोण को भेज दिया। फिर कुछ दिन बाद कौरव और पांडवों को द्रोण के शिष्यों के रूप में सौंप दिया।

द्रोण ने सब राजकुमारों को इकट्ठा कर कहा—"धनुर्विद्या सीखने के बाद तुम लोगों को मेरा एक कार्य करना होगा।"

सब राजकुमार मौन रहे। पर अर्जुन ने कहा—"गुरुदेव! मैं आप की आज्ञा का पालन करूँगा।"

द्रोण की प्रसन्नता की सीमा न रही। उसने अर्जुन को गले लगाकर कई बार उसका माथा चूमा।

द्रोणाचार्य के पास धृतराष्ट्र और पांडु के ही पुत्र नहीं, बल्कि हस्तिनापुर में आये हुये यादव कुमार भी शिष्य बनकर धनुर्विद्या सीखने लगे। सूत के घर पला कर्ण भी द्रोण का शिष्य बन गया।

उस दिन कर्ण दुर्योधन से प्रभावित हुआ। समय पाकर वह पांडवों का परिहास करता और अपमान भी करता था। द्रोण के कहे अनुसार एक अर्जुन ही बड़ी सामर्थ्य के साथ अस्त्रों का प्रयोग करता

जाता। इसलिए द्रोण सोचा करता कि अर्जुन उसके बराबर का योद्धा बनेगा।

द्रोण प्रति दिन अपने शिष्यों के हाथ लोटे देकर पानी लाने का आदेश देता। अपने पुत्र अश्वत्थामा को बड़े मुँह वाला लोटा देकर बाकी लोगों को छोटे मुँह वाले लोटे देता। जो पहले लौटता, उसे अस्त्रों के अनेक रहस्य बताता। बड़े मुँह वाला लोटा जल्द भर कर अश्वत्थामा सब से पहले लौटता। अर्जुन के लोटे का मुँह छोटा ज़रूर था, फिर भी वारुणास्त्र के प्रभाव से उसे जल्दी भरकर अश्वत्थामा के साथ लौटता और अश्वत्थामा ने जो जो विद्याएँ सीखी, उन्हें अर्जुन ने भी सीखीं। इस वजह से अश्वत्थामा अर्जुन से मन ही मन जलता था।

द्रोण के घर एक दिन रात को सब भोजन कर रहे थे तब हवा के झोंकों से दीपक बुझ गया। फिर भी भोजन करने में उन्हें कोई तकलीफ न हुई। तब अर्जुन ने सोचा—"अभ्यास के कारण ही तो अंधेरे में भी खाना खा पा रहे हैं। अंधेरे में ही धनुर्विद्या का अभ्यास क्यों नहीं किया जा सकता।" यह सोचकर ऐसा ही अभ्यास करना शुरू किया। अंधेरे में निशाना साधकर बाण छोड़ने की उसे आदत पड़ गयी।

एक दिन रात को धनुष की टंकार की ध्वनि सुनकर द्रोण की निद्रा भंग हुई। उसने उठकर अर्जुन के धनुर्विद्या का अभ्यास करते देख उसे गले लगाया और कहा—"बेटा! मैं तुमको अच्छी शिक्षा देकर ऐसा तैयार करूँगा कि धनुर्विद्या में कोई भी तुम्हारी बराबरी न कर सके।" द्रोण ने अपने कहे अनुसार अर्जुन को द्वन्द्व युद्ध सिखाया। रथ और हाथियों के बीच खड़े हो युद्ध करने का तरीका सिखाया। गदा-युद्ध आदि सिखाकर उसके सभी रहस्य बता दिये।
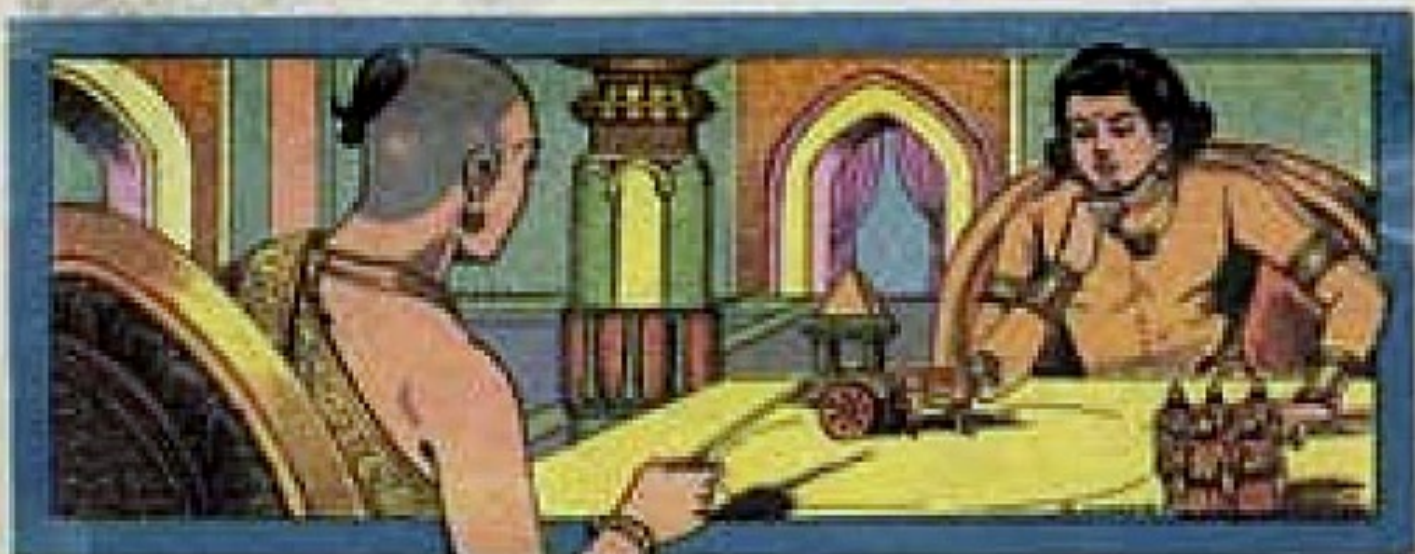
गांधी की कहानी

[७]

गांधीजी पर यह हमला १३ जनवरी १८९७ को हुआ था। यह एक प्रमुख दिन था। उस दिन से भारतीयों तथा कुछ विवेकशील गोरों के मन में भी गांधीजी के प्रति आदर का भाव बढ़ गया।

१८९९ में बोअर युद्ध हुआ। यह युद्ध इस बात का फ़ैसला करने के लिए हुआ कि दक्षिण आफ्रिका पर ब्रिटिशवालों का अधिकार है अथवा बोअरों का। ये दोनों जातियाँ भारतीयों के प्रति अन्यायपूर्ण व्यवहार करती थीं। इसलिए गांधीजी के समक्ष यह एक कठिन समस्या हो गयी कि इस युद्ध में नेटाल के भारतीयों को किसका पक्ष लेना चाहिए। उस समय तक गांधीजी में शांति और अहिंसा के सिद्धांत पूर्ण रूप से घर कर नहीं गये थे। आखिर गांधीजी ने ब्रिटिशवालों का समर्थन करने का निश्चय किया। कुछ लोगों ने समझाया कि युद्ध में बोअरों की विजय होगी, इसलिए भारतीय तटस्थ रहें तो लाभदायक होगा। किंतु गांधीजी ने उसे कायरता बता दी।

भारतीयों में से अधिक लोगों ने गांधीजी के विचारों का समर्थन किया। लेकिन ब्रिटिशवालों ने इनके सहयोग को तुरंत स्वीकार नहीं किया। युद्ध में ब्रिटिश दल जब खूब चोट पर चोट खाने लगे, तब उन्हें एक भारतीय एंबुलेन्स दल का प्रबंध करने की अनुमति मिली। इस दल के नेता गांधीजी थे। इस दल में ११०० भारतीयों ने काम किया। इस दल का काम युद्ध-क्षेत्र में घायल हुए सैनिकों को २० मील की दूरी पर स्थित एक केन्द्र में ले जाने का था।
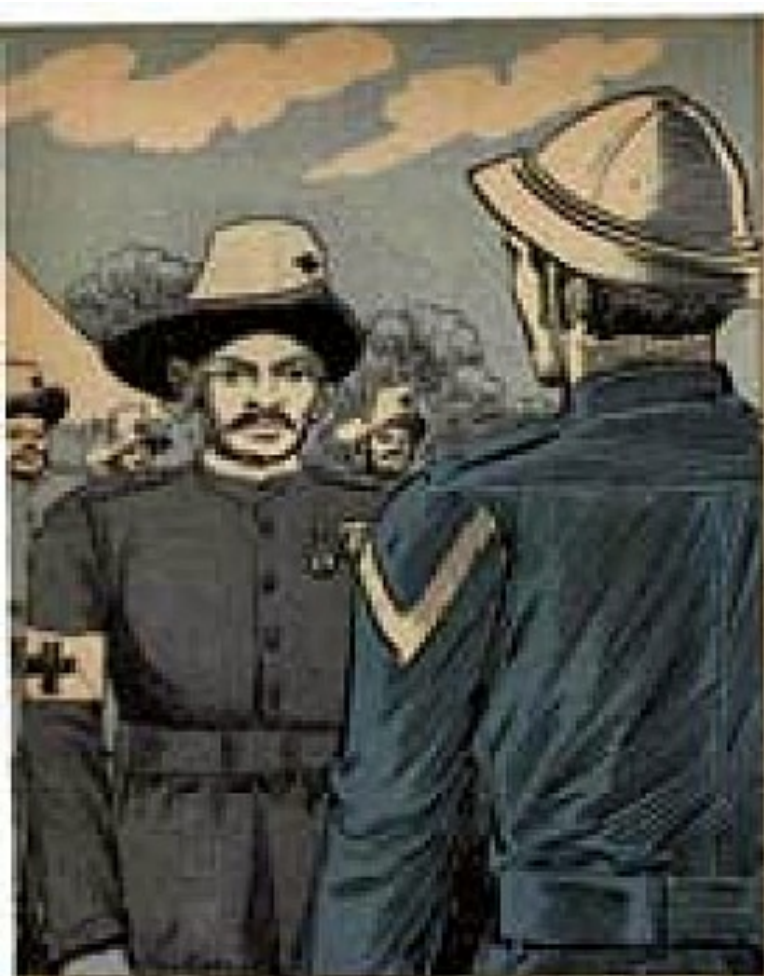
इस एंबुलेन्स दल ने खूब प्रशंसाएँ प्राप्त कीं। दल में प्रमुख भाग लेनेवाले ३७ लोगों को पदक भी पुरस्कृत किये गये। इससे भारतीयों के प्रति ब्रिटीशवालों के मन में इज्जत बढ़ी। यह सोचकर गांधीजी १९०१ में भारत के लिए रवाना हुए कि अब नेटाल के भारतीयों को उनकी आवश्यकता अधिक न होगी। उस समय कलकत्ते में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। उसमें गांधीजी ने भाग लिया। उन्हें मालूम हुआ कि कांग्रेस में एकता नहीं और वैमनस्य भी है। उन्हों ने कांग्रेस के महामंत्री के साथ कार्य किया। उस अधिवेशन में गांधीजी ने दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों की बुरी हालत पर एक प्रस्ताव प्रतिपादित कराया।

अधिवेशन के बाद गांधीजी ने गोखलेजी के साथ एक महीना बिताया। गोखलेजी का विचार गांधीजी को भारतीय राजनीति के क्षेत्र में खींचने का था। उनकी सलाह से ही गांधीजी ने बंबई के शांताक्रूज में एक अच्छा बंगला किराये पर लिया और वकालत शुरू की। उनकी वकालत जल्द खूब चमकी। लेकिन गोखलेजी का विचार पूरा न हुआ। फिर गांधीजी को दक्षिण आफ्रिका से बुलावा आया।

बात यों हुई—ब्रिटीशवालों तथा बोअरों के बीच जब युद्ध शुरू हुआ तब ब्रिटीश सरकार ने भारतीयों के प्रति बोअरों के व्यवहार की कड़ी आलोचना की। लेकिन युद्ध के समाप्त होने पर बोअरों के कानूनों में सुधार लाने के लिए ब्रिटीश सरकार ने एक कमिटी नियुक्त की। उस कमिटी ने बोअरों के जाति-विद्वेष की रीतियों का खूब समर्थन किया। ट्रान्सवाल में रहनेवाले एशियावासियों को नियंत्रण में रखने के लिए एक सरकारी विभाग भी खोला गया।

गांधीजी १९०२ दिसंबर में डर्बन पहुँचे। उस वक्त ब्रिटीश औपनिवेशिक मंत्री चांबर्लेन वहाँ पर आये। उन से मिलने के लिए एक भारतीय प्रतिनिधि मंडल बना, उसका गांधीजी ने नेतृत्व किया। चांबर्लेन ने प्रतिनिधि मण्डल को सलाह दी कि औपनिवेशिक सरकार सर्व स्वतंत्र है, इसलिए भारतीयों को यहाँ की सरकार के साथ किसी न किसी प्रकार समझौता कर लेना उचित है।

चांबर्लेन नेटाल से जब ट्रान्सवाल गये, तब गांधीजी ने ट्रान्सवाल के भारतीयों का प्रतिनिधित्व करने का यत्न किया, लेकिन ट्रान्सवाल की सरकार ने उन्हें मौका न दिया। दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों ने गांधीजी को जो निमंत्रण दिया था, वह इस प्रकार असफल रहा।

गांधीजी को अब भारत लौटकर अपने परिवार के साथ आराम से जिन्दगी बिताने के सिवा दूसरा कोई उपाय न सूझा। लेकिन वे अपने ऊपर पूर्ण रूप से विश्वास कर निर्भर रहनेवाले दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों को छोड़ भारत न लौट सके, उन्होंने ट्रान्सवाल के सुप्रीम कोर्ट में अटार्नी के रूप में प्रवेश प्राप्त कर वकालत शुरू की। उनके जीवन में यह एक बड़ा मोड़ कहा जा सकता है। दक्षिण आफ्रिका के भारतीयों को गोरों के साथ अपने समान अधिकारों के लिए लड़ना नहीं था, बल्कि अपने प्राथमिक अधिकारों के लिए लड़ना था। उनका विरोध करनेवाली शक्तियाँ पैशाचिक शक्तियाँ थीं। ऐसे समर का गांधीजी ने नेतृत्व ग्रहण किया। इसके लिए गांधीजी को अपने नैतिक व आध्यात्मिक शक्तियों को पूर्ण रूप से विकसित करना पड़ा।

राजनीति में उत्साह के साथ भाग लेने से गांधीजी की वकालत बढ़ गयी। उनकी वार्षिक आमदनी पांच हज़ार

पीछे तक रही। लेकिन उन्होंने सभी मुकद्दमों को स्वीकार नहीं किया। अन्याय पूर्ण मुकद्दमों का पक्ष लेना उन्होंने कभी अपने पेशे का धर्म न समझा। डर्बन के एक पारसी मित्र ने सरकारी शुल्क न चुकाने और गांधीजी की सलाह मांगी। गांधीजी ने तो उसका समर्थन नहीं किया, बल्कि अधिकारियों के पास जाकर उसके अन्यायों को प्रकट करने के लिए उसे समझाया। अदालत संबंधी ही नहीं बल्कि पारिवारिक तथा व्यक्तिगत समस्याओं के बारे में भी कई लोग गांधीजी की सलाह मांगा करते थे। वे रोगियों के लिए प्राकृतिक चिकित्सा किया करते थे।

गांधीजी ने जहां तक हो सके, अपने जीवन को सरल बनाने का प्रयत्न किया। वे अपने कपड़े आप धो लेते थे। अपने बाल स्वयं बना लेते थे। गोरे नाइयों ने उनके बाल बनाने से इनकार किया था। गरीब भारतीयों के लिए मुफ्त में दवाएं बांटनेवाला एक अस्पताल बनाया, उसमें दवाएं देने का काम सीखा। रोगियों की सेवा करना, प्रसूति संबन्धी बातों की जानकारी भी आपने पुस्तकें पढ़कर प्राप्त की। गांधीजी के आखिरी पुत्र का जब जन्म हुआ, तब गांधीजी ने स्वयं धाय का काम किया, क्यों कि धाय वक्त पर पहुंच न सकी थी।

गांधीजी ने अध्यापक का काम भी किया। भारतीय बच्चों को यूरोपीय पाठशालाओं में पढ़ने नहीं देते थे। पर गांधीजी के बच्चों के लिए ऐसा मौका जरूर था, फिर भी वे उन्हें स्कूल में नहीं भेजते, बल्कि वे खुद पढ़ाते थे। यह पढ़ाई ठीक से चल न पाती थी। पढ़ाई के बीच मुवक्किल या दोस्त आ धमकते थे। कस्तूरबा गांधी खीझ उठती थी, फिर भी गांधीजी ने अपने बच्चों को गोरों की पाठशालाओं में पढ़ने नहीं दिया।